आई.एस.एस.एन. 2230—7044 पुलिस विज्ञान

वर्ष - 33 अंक 132 जुलाई-सितंबर, 2015

वर्ष - 33 अंक 132 जुलाई-सितंबर, 2015

पुलिस विज्ञान

(त्रैमासिक पत्रिका)

जुलाई-सितंबर, 2015

सलाहकार समिति

नवनीत राजन वासन

महानिदेशक

आर.के. किणि ए.

विशेष महानिदेशक

डा. निर्मल कुमार आजाद

महानिरीक्षक (प्रशा.)

सुनील कपूर

उप महानिरीक्षक (एस. एंड पी.)

संपादक : **दिवाकर शर्मा**

पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो

ब्लाक-11, 3 एवं 4 मंजिल

सी.जी.ओ. काम्पलैक्स, लोदी रोड

नई दिल्ली-110003

'पुलिस विज्ञान' में प्रकाशित लेखों में लेखकों के विचार निजी हैं। इनसे पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो, गृह मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली की सहमति आवश्यक नहीं।

संपादकीय

पुलिस विज्ञान त्रैमासिक पत्रिका का जुलाई-सितंबर, 2015 का अंक पाठकों के समक्ष प्रस्तुत है। जैसा कि संपादक मंडल का यह प्रयास रहता है कि पत्रिका में पुलिस, न्यायालयिक विज्ञान व अन्य संबंधित विषयों की प्रामाणिक व प्रासंगिक जानकारी प्रदान की जाए। अतः अपराधों को सुलझाने में पुलिसकर्मियों द्वारा किस प्रकार की कार्यप्रणाली अपनाई जाए, अपराधों से निपटने तथा अपराध होने की संभावनाओं से संबंधित कुछ ओजस्वी विचार तथा प्रेस की भूमिका पर वरिष्ठ पुलिस अधिकारियों तथा समाज के कुछ प्रबुद्ध वर्ग द्वारा प्रस्तुत किए जाते हैं जो आम पुलिसकर्मी के साथ सभी वर्ग के लिए उपयोगी होते हैं।

इस अंक में इस बार पुलिसकर्मियों के लिए **पुलिस सुधार : एक अंतहीन कथा; भारतीय फिल्मों में पुलिस की छवि; कन्या भ्रूण हत्या : जिम्मेदार कौन ?; जैसा व्यवहार आप अपने प्रति चाहते हैं, वैसे ही दूसरों के साथ करें; दहेज उत्पीड़न कानून में आरोपियों की तत्काल गिरफ्तारी अनुचित; अपराध, शोषण और नशे में डूबा यह कैसा बचपन ?; उत्पीड़ित व्यक्ति एवं उत्पीड़नशास्त्र तथा क्या है पुलिस स्टेशन ?** से संबंधित लेख हैं। पत्रिका के सुधी पाठक पत्रिका को और अधिक सूचनाप्रद व उपयोगी बनाने में अपना सक्रिय सहयोग प्रदान कर सकते हैं। आशा है कि पत्रिका में सम्मिलित सभी लेख पाठकों को उपयोगी लगेंगे और वे अपने विचारों से संपादक मंडल को अवगत कराते रहेंगे। आपके विचारों का सहर्ष स्वागत है।

दिवाकर शर्मा
संपादक

वर्ष - 33 अंक 132 जुलाई-सितंबर, 2015

अनुक्रम

पुलिस सुधार : एक अंतहीन कथा
- *डा. दीप्ति श्रीवास्तव* ---------- 7

भारतीय फिल्मों में पुलिस की छवि
- *डा. सुरेंद्र कटारिया* ---------- 13

कन्या भ्रूण हत्या : जिम्मेदार कौन?
- *श्रीमती वीणा पाठक* ---------- 18

जैसा व्यवहार आप अपने प्रति चाहते हैं, वैसा ही दूसरों के साथ करें
- *राकेश 'चक्र'* ---------- 25

दहेज उत्पीड़न कानून में आरोपियों की तत्काल गिरफ्तारी अनुचित
- *अरुण कुमार पाठक* ---------- 28

अपराध, शोषण और नशे में डूबा यह कैसा बचपन?
- *प्रकाश तिवारी* ---------- 32

उत्पीड़ित व्यक्ति एवं उत्पीड़नशास्त्र
- *डा. मीरा सिंह* ---------- 36

क्या है पुलिस स्टेशन?
- *इंदराज सिंह* ---------- 42

समीक्षा समिति के सदस्य

प्रो. एम.जैड. खान, नई दिल्ली
श्री एस.वी.एम. त्रिपाठी, लखनऊ
प्रो. अरुणा भारद्वाज, नई दिल्ली
प्रो. जे.डी. शर्मा, सागर (म.प्र.)
प्रो. स्नेहलता टंडन, नई दिल्ली
डा. दीप्ति श्रीवास्तव, भोपाल
प्रो. वी.के. कपूर, जम्मू
डा. शैलेंद्र कुमार चतुर्वेदी, मेरठ
डा. अरविंद तिवारी, मुंबई
डा. उपनीत लल्ली, चंडीगढ़
श्री वी.वी. सरदाना, फरीदाबाद
श्री सुनील कुमार गुप्ता, नई दिल्ली

'पुलिस विज्ञान' में प्रकाशित लेखों में लेखकों के विचार निजी हैं। इनसे पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो, गृह मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली की सहमति आवश्यक नहीं।

कवर डिजायन : राहुल कुमार

अक्षरांकन एवं पृष्ठ सज्जा : ओम प्रकाशन, डी-46, विवेक विहार (भूतल), दिल्ली-110095

पुलिस सुधार : एक अंतहीन कथा

डा. दीप्ति श्रीवास्तव
चित्रांश विला, 289, सैनिक कुन्ज,
कुडाघाट गोरखपुर उ.प्र.-273008

देश में पुलिस सुधार एक अंतहीन कथा करीब चार दशकों से चर्चा और समितियों, आयोगों का दौर। धूल खाती पेश रिपोर्ट नतीजा अब भी अधूरा।

पुलिस

यानी पोलाइट (विनम्र), ओबिडियट (अज्ञाकारी), लायल (निष्ठावान), इंटेलीजेंट (बुद्धिमान), करेजियस (साहसी) और ईगर टु हेल्प (सेवा में तत्पर), सामाजिक ताने-बाने में इन गुणों से सुशोभित लोग पुलिस के दायित्व को निभाते रहे। कालांतर में इन दायित्वों की आधिकारिक जवाबदेही सुनिश्चित करने के लिए एक सरकारी महकमे की जरूरत हुई। लिहाजा व्यवस्था में पुलिस तंत्र का सूत्रपात हुआ। तंत्र के नियमन के लिए देश में 1861 में अंग्रेजों ने पुलिस कानून बनाया।

परेशानी

समय बीतता गया। कानून व्यवस्था को लेकर पुलिस की भूमिका और जिम्मेदारियों में आमूलचूल परिवर्तन आता गया। लिहाजा विशेष देश, काल और परिस्थितियों में अंग्रेजों द्वारा बनाया गया पुलिस कानून अप्रासंगिक होता चला गया। सरकार चेती। सुधार की कवायदें शुरू हुईं। पुलिस का मानवीकरण और जोर पकड़ता चला गया। समितियों और आयोगों के गठन की लाइनें लग गईं। इनकी अहम सिफारिशें पुलिसिया तंत्र का चेहरा चमकाने के लिए काफी थीं, मगर अफसोस हमारे नीति नियंताओं ने इनको लागू करने के प्रति संजीदगी नहीं दिखाई। उनको तो जैसे जनता की नहीं, बल्कि सत्ता की पुलिस चाहिए थी। हारकर मामले में न्यायपालिका को हस्तक्षेप करना पड़ा। मगर नतीजा वही ढाक के तीन पात।

प्रश्न

पुलिस सुधार पर की जा रही राजनीति और तर्कों-कुतर्कों वाली दलीलें न केवल पुलिस तंत्र से खिलवाड़ करने वाली हैं, बल्कि ऐसे में भयमुक्त समाज की अवधारणा भी बेमानी है जिस तंत्र से इलाज मिलना है अगर वही कैंसरग्रस्त है तो कानून व्यवस्था का हाल भगवान भरोसे ही होगा। ऐसे में चार दशक से लंबित पुलिस सुधार को लागू करवाना हम सबके लिए सबसे बड़ा मुद्दा है।

समाज को अपराधमुक्त और लोगों द्वारा बेखौफ जीवन जीने के लिए निगहबान के रूप में खाकी की संकल्पना की गई। लिहाजा अंग्रेजों ने 1861 में पुलिस कानून देश, काल और परिस्थितियों को ध्यान में रखकर बनाया था। पर अफसोस कि आज डेढ़ सदी बाद भी उसी कानून से काम चलाया जा रहा है। सुप्रीम कोर्ट में पुलिस अफसरों की जनहित याचिका पर पूरे दस साल चली सुनवाई के बाद अदालत ने केंद्र और राज्य सरकारों के लिए पुलिस सुधार को लेकर 22 सितंबर, 2006 को जो निर्देश जारी किए। उन निर्देश द्वारा चार नई संस्थाओं की स्थापना पर जोर दिया गया।

1. राज्य सुरक्षा आयोग
2. पुलिस स्टेब्लिशमेंट बोर्ड
3. पुलिस शिकायत प्राधिकरण
4. नेशनल सिक्योरिटी कमीशन

1. राज्य सुरक्षा आयोग जो जिम्मेदारी दी गई कि वह पुलिस के दैनिक कार्यों में राज्य सरकार का हस्तक्षेप न होने दे और पुलिस भी कानून सीमा का अतिक्रमण न करे।

2. पुलिस स्टेब्लिशमेंट बोर्ड द्वारा विभाग को कार्मिक मामलों में स्वायत्ता दी गई।

3. पुलिस शिकायत प्राधिकरण द्वारा पुलिस के विरुद्ध गंभीर शिकायतों की जांच कर उस पर अंकुश लगाने की जिम्मेदारी दी गई।

4. नेशनल सिक्योरिटी कमीशन को जिम्मेदारी दी गई कि वह केंद्रीय पुलिस बलों में सुधार की समय-समय पर समीक्षा करे और इन बलों के प्रमुखों के चयन में सरकार को अपनी संस्तुतियां दे।

इसके अलावा कोर्ट ने महानिदेशक की चयन प्रक्रिया निर्धारित की और कहा कि पदासीन होने के पश्चात उनका कार्यकाल कम-से-कम दो वर्ष रहे। जनपदों या परिक्षेत्रों में आपरेशनल ड्यूटी पर तैनात अन्य अधिकारियों का कार्यकाल भी दो वर्ष निर्धारित किया गया। कोर्ट ने यह भी कहा कि अपराध अन्वेषण और शांति व्यवस्था के कार्यों के लिए बड़े शहरों में अलग-अलग स्टाक हो। कोर्ट के आदेशों से राजनीतिक गलियारों और राज्यों में खलबली मची। नेताओं को आदत पड़ चुकी है कि पुलिस उनके इशारे पर कार्य करे और वह जो भी उल्टे-सीधे कार्य करें, पुलिस उनका समर्थन करे। अफसरशाही को भी पुलिस की घुड़सवारी करने की आदत पड़ गई। विकास का कार्य हो या न हो वह शांति व्यवस्था में दखल जरूर देना चाहते हैं। इन दोनों वर्गों ने डटकर पुलिस सुधार का विरोध किया। कई राज्यों ने कोर्ट के आदेशों का खुल्लमखुल्ला उल्लंघन किया, कई राज्यों ने डरते हुए आंशिक अनुपालन किया और कुछ राज्यों ने आदेशों के अनुपालन की स्वीकृत तो अवश्य दी, परंतु वास्तव में कोई परिवर्तन नहीं किया।

कई प्रदेश तो ज्यादा होशियार थे, अतः उन्होंने फाटाफट अधिनियम पारित कर दिया। कोर्ट के आदेश में यह लिखा गया था कि उसके निर्देश तब तक लागू रहेंगे जब तक कि राज्य सरकार इस विषय पर अपने एक्ट न बना ले। राज्य सरकार ने इस प्रावधान का लाभ उठाते हुए एक्ट तो अवश्य बनाया परंतु वह एक्ट वास्तव में सुप्रीम कोर्ट के निर्देशों का उल्लंघन करते हुए वर्तमान व्यवस्था को कानूनी जामा पहनाते हुए बनाया। नतीजा यह कि सुधार की दिशा में राज्य सरकारों और केंद्र शासित प्रदेशों ने हिचकिचाते हुए कुछ कदम अवश्य उठाए, परंतु वास्तव में अपेक्षित सुधार हुआ नहीं है। बीपीआरडी ने 1979 में पालिटिकल एंड एडमिनिस्ट्रेटिव मैनीपुलेशन आफ पुलिस पर एक रिसर्च पेपर जारी किया था और पाया कि पुलिस पर दोहरा दबाव रहता है। दस सुझाव भी दिए गए, जिनमें पुलिस के मुख्य और संवेदनशील पदों पर नियुक्ति तथा कार्यकाल तय करने में राजनीतिक विचार को महत्व नहीं दिए जाने की सिफारिश की गई।

22 सितंबर, 2006 में कोर्ट द्वारा पुलिस सुधार संबंधी दिए गए दिशानिर्देश के बाद का घटनाक्रम

11 जनवरी, 2007 : सुप्रीम कोर्ट ने अपने बदलाव करने से साफ इंकार कर दिया। हालांकि सरकारों को आदेश पर अमल के लिए 31 मार्च, 2002 तक का समय दे दिया।

23 अगस्त, 2007 : गुजरात, कर्नाटक, पंजाब, महाराष्ट्र, तमिलनाडु और उत्तर प्रदेश की पुनर्विचार याचिकाएं खारिज हुईं।

मई, 2008 : सुप्रीम कोर्ट के आदेश पर अमल की निगरानी के लिए सेवानिवृत्त न्यायाधीश केटी थामस की अध्यक्षता में एक कमेटी बनाई।

8 नवंबर, 2010 : थामस कमेटी की रिपोर्ट पर अपने पूर्व के आदेश पर कुछ भी अमल न करने वाले राज्यों—पश्चिम बंगाल, कर्नाटक, महाराष्ट्र व उत्तर प्रदेश को नोटिस जारी किया और उनके मुख्य सचिवों को 6 दिसंबर, 2010 को अदालत में तलब किया। 6 दिसंबर, 2010 : उत्तर प्रदेश के अलावा तीन राज्यों के मुख्य सचिव अदालत में पेश हुए और उन्होंने स्टेट सिक्योरिटी कमीशन के गठन के आदेश पर अमल करने की हामी भरी। इसी दिन सुप्रीम कोर्ट में केंद्र सरकार को

केडर मैनेजमेंट रूल रेगुलेशन में बदलाव पर विचार करने का निर्देश दिया। ये डीजीपी की नियुक्ति के इम्पैनलमेंट के बारे में था।

10 जनवरी, 2011 : सुधारों पर सोरावली माडल अख्तियार करने वाले उत्तर प्रदेश को काइनेस्टेट सिक्योरिटी कमीशन में सेवानिवृत्त हाईकोर्ट जज को शामिल करने का निर्देश दिया।

11 अप्रैल, 2011 : सालिसीटर जनरल ने पुलिस की जांच इकाई को कानून व्यवस्था की इकाई से अलग करने पर निर्देश लेने के लिए समय मांगा। इसके अलावा डीजीपी और आइजी को 2 वर्ष का निश्चित कार्यकाल देने पर भी निर्देश लेने के लिए समय मांगा।

16 अक्टूबर, 2012 : कोर्ट ने सभी से आदेश पर अमल के बारे में स्थिति रिपोर्ट दाखिल करने के लिए आठ सप्ताह का समय दिया।

पुलिस सुधार के लिए कुछ राज्यों के प्रयास

1. केरल पुलिस पुनर्गठन आयोग 1959
2. पश्चिम बंगाल पुलिस आयोग 1960-61
3. पंजाब पुलिस आयोग 1961-62
4. दिल्ली पुलिस आयोग 1968
5. तमिलनाडु पुलिस आयोग 1971
6. मध्य प्रदेश पुलिस आयोग विधेयक
7. आंध्र प्रदेश पुलिस विधेयक

सुप्रीम कोर्ट द्वारा नये पुलिस अधिनियम के निर्देश पर एतराज जताने वाले राज्य

उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, पश्चिम बंगाल, केरल, त्रिपुरा, असम, नगालैंड, मिजोरम, मणिपुर, अरुणाचल प्रदेश।

खाकी को बदलने के लिए अब तक क्या-क्या कदम उठाए गए :—

1. भारतीय पुलिस आयोग (1902-03) : इस आयोग ने पुलिस की कार्यशैली की समीक्षा कर अपनी रिपोर्ट दी। इस आयोग ने अपनी रिपोर्ट में इस पूरे तंत्र को असफल घोषित कर दिया। अपनी सिफारिशों में इसने कहा कि आमूलचूल सुधार तुरंत आवश्यक है। यह पहला मौका था कि किसी जिम्मेदार निकाय ने पुलिस सुधार की बात की।

2. राष्ट्रीय पुलिस आयोग (1979-1981) : देश में आपातकाल के दौरान पुलिस महकमें की विसंगतियां सामने आईं। लिहाजा तत्कालीन केंद्र सरकार को इस तंत्र में सुधार के लिए 1972 में राष्ट्रीय पुलिस आयोग का गठन करना पड़ा। इस आयोग ने पुलिस तंत्र के संगठन दायित्व की कार्यप्रणाली में राजनीतिक हस्तक्षेप, पुलिस शक्ति का दुरुपयोग और विभाग की जवाबदेही व प्रदर्शन के मूल्यांकन सहित व्यापक संदर्भों का अध्ययन किया। 1979 से 1981 के बीच इस आयोग ने अपनी आठ रिपोर्टें पेश कीं। सभी रिपोर्टें में इसने पुलिस तंत्र में व्यापक सुधार संबंधी अपनी सिफारिशें दी।

3. रिबेरो कमेटी (1998-1999) : 1996 में दो पूर्व वरिष्ठ पुलिस अधिकारियों ने सुप्रीम कोर्ट में एक जनहित याचिका दाखिल कर सरकार द्वारा राष्ट्रीय पुलिस आयोग की सिफारिशों को लागू करने की मांग की। न्यायालय के निर्देश पर मई 1998 में सरकार ने रिबेरो कमेटी का गठन किया। इस कमेटी का दायित्व राष्ट्रीय पुलिस आयोग, राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग और वोहरा कमेटी की सिफारिशों को लागू करने के लिए उठाए गए कदमों की समीक्षा करना था। साथ ही लंबित सिफारिशों को लागू करने संबंधी सुझाव या अन्य जरूरी सिफारिशें इसे करनी थीं।

याचिकाकर्ताओं की मांग पर सुप्रीम कोर्ट से इन समिति को राष्ट्रीय पुलिस आयोग की सिफारिशों को लागू करने संबंधी सुझाव या अन्य जरूरी सिफारिशें इसे करनी थीं। याचिकाकर्ताओं की मांग पर सुप्रीम कोर्ट ने इस समिति को राष्ट्रीय पुलिस आयोग की सिफारिशों को लागू करने के लिए उठाए गए कदमों की समीक्षा का

निर्देश दिया। इन सिफारिशों में राज्य सुरक्षा आयोग, पुलिस प्रमुखों की नियुक्ति के तरीकों और पुलिस के काम में जांच और कानून व्यवस्था को अलग करना शामिल था। इस कमेटी ने दो रिपोर्ट पेश कीं। सुप्रीम कोर्ट की विशेष चिंताओं पर आधारित पहली रिपोर्ट अक्टूबर 1998 और दूसरी सामान्य रिपोर्ट मार्च 1999 में पेश की गई।

4. पद्मनामैया कमेटी (2000) : जनवरी 2000 में केंद्र सरकार ने पुलिस सुधार के लिए एक और समिति पद्मनामैया का गठन किया। इसने अगस्त 2000 में अपनी रिपोर्ट पेश की। इस समिति का कार्य दायित्व व्यापक था। इनमें अगली सहस्राब्दी को पुलिस में समझ चुनौतियों के आकलन सहित एक ऐसी जन मित्रवत् पुलिस की संकल्पना पेश करनी थी जो उग्रवादी और आतंकवाद एवं संगठित अपराधों से प्रभावकारी रूप से निपटने में सक्षम हो। ऐसे रास्ते सुझाने थे जिससे पुलिस का एक प्रोफेशनल और सक्षम फोर्स बनाया जा सके। पहचान को एक ऐसा कवच पहनाने का सुझाव देना था। जिससे राजनीतिक हस्तक्षेप पर विराम लग सके अपने तमाम कार्यदायित्वों पर इस समिति ने इस समिति में कई अहम सुझाव दिए। इनमें प्रमुख सुझाव पुलिस कानून को बदले जाने संबंधी था।

5. पुलिस एक्ट ड्राफ्टिंग कमेटी (2005-2006) : 2005 में सोली सोराबजी की अध्यक्षता में पुलिस एक्ट

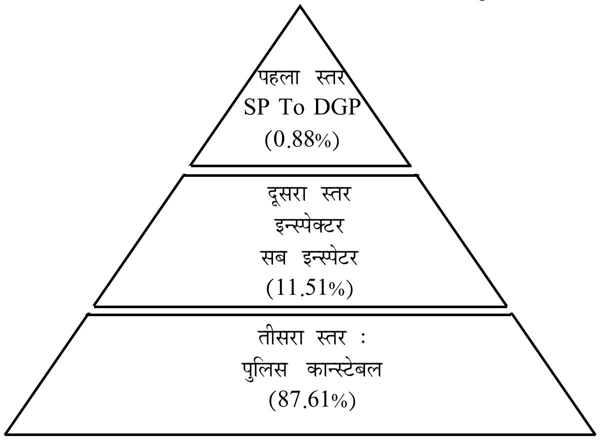

स्रोत : http//bprd.nic.in

ड्राफ्टिंग कमेटी का गठन किया गया। सितंबर, 2005 में कमेटी ने बैठक शुरू की और अक्टूबर, 2006 में केंद्र सरकार के पास एक माडल पुलिस कानून बनाकर पेश किया। इस कमेटी के कार्यदायित्वों में पुलिस की बदलती भूमिका और जिम्मेदारियों के आलोक में एक नया कानून तैयार करना था।

6. प्रकाश सिंह बनाम भारत सरकार (2006-07) : 1996 में दो पूर्व पुलिस महानिदेशकों ने सुप्रीम कोर्ट में एक जनहित याचिका दायर की। उन याचिकाओं में उन्होंने मांग की कि केंद्र और राज्य सरकारों को उनके यहां पुलिस की खराब गुणवत्ता और प्रदर्शन को सुधारने का सुप्रीम कोर्ट निर्देश दे। करीब एक दशक तक लटके इस मसले पर सुप्रीम कोर्ट में 2006 में केंद्र और राज्यों को सात अहम दिशा-निर्देश दिए। ये दिशा-निर्देश सभी के लिए बाध्यकारी थे। 2006 के अंत तक सभी को इस संबंध में उठाए गए कदमों से सुप्रीम कोर्ट को अवगत कराना था। ज्यादातर राज्यों में कोर्ट से और समय की मांग की। अदालत ने अपने निर्णय की समीक्षा से इंकार करते हुए मार्च 2002 तक इन दिशा-निर्देशों के अनुपालन का आदेश दिया।

सुझाव

1. आज पुलिस शासक की पुलिस है। इस छवि को जनता की पुलिस में बदला जाए।

2. शासन का पुलिस पर जो शिकंजा है वह समाप्त होना चाहिए और पुलिस को देश के कानून के अंतर्गत काम करने की स्वायत्तता होनी चाहिए।

3. कानून का शासन स्थापित करना पुलिस का सर्वोच्च उद्देश्य होना चाहिए।

4. अपराधों के पंजीकरण में सुधार होना चाहिए। अपराधों की स्थिति का आकलन आंकड़ों के आधार पर नहीं होना चाहिए।

5. मानवाधिकारों में आस्था रखते हुए जनता के प्रति पुलिसिया व्यवहार में सुधार हो।

तालिका

पुलिस—जनसंख्या और क्षेत्र अनुपात —01-01-2012

(स्वीकृत) और (वास्तविक)

क्र.सं	राज्य	सिविल पुलिस (प्रति लाख जनसंख्या)		कुल पुलिस (प्रति लाख जनसंख्या)		सिविल पुलिस (प्रति 10059 कि.मी. क्षेत्र)		कुल पुलिस (प्रति 10059 कि.मी. क्षेत्र)	
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
		स्वीकृत	वास्तविक	स्वीकृत	वास्तविक	स्वीकृत	वास्तविक	स्वीकृत	वास्तविक
1.	आंध्र प्रदेश	135.03	88.90	155.88	104.92	41.99	27.52	418.25	326.47
2.	अरुणाचल प्रदेश	624.34	432.48	919.15	622.91	9.34	6.47	13.75	9.32
3.	असम	101.46	91.73	197.19	176.63	40.78	36.87	70.27	71.00
4.	बिहार	69.79	55.20	88.25	68.69	73.33	58.00	92.73	72.18
5.	छत्तीसगढ़	171.98	125.60	251.26	190.45	31.81	23.23	46.48	35.23
6.	गोवा	244.86	231.77	343.65	291.71	119.72	113.32	168.02	142.63
7.	गुजरात	138.86	89.09	175.16	97.93	42.18	26.87	52.82	29.53
8.	हरियाणा	227.40	137.75	246.20	163.98	128.66	77.94	139.29	92.78
9.	हिमाचल प्रदेश	160.72	143.72	254.33	217.20	19.51	17.44	30.87	36.36
10.	जम्मू एवं कश्मीर	355.76	336.11	558.34	521.69	48.34	46.24	76.81	71.76
11.	झारखंड	177.41	129.47	233.20	176.33	69.93	51.03	91.92	69.50
12.	कर्नाटक	131.73	119.48	152.43	163.11	40.88	3.08	77.30	41.31
13.	केरल	117.05	113.06	142.52	130.79	107.28	102.83	129.62	18.95
14.	मध्य प्रदेश	83.18	74.42	113.67	103.94	19.86	17.77	27.14	24.82
15.	महाराष्ट्र	148.99	110.66	162.75	120.58	54.09	40.17	52.08	43.77
16.	मणिपुर	648.98	374.43	1133.59	842.60	79.70	45.98	139.22	103.48
17.	मेघालय	264.16	220.54	483.08	418.50	31.19	26.04	59.03	49.41
18.	मिजोरम	455.48	437.57	1100.39	1020.35	22.08	21.21	53.35	49.47
19.	नगालैंड	385.81	384.56	1063.60	1059.83	53.13	52.96	146.46	145.94
20.	उड़ीसा	80.56	71.36	133.31	111.29	21.37	18.93	35.37	29.53
21.	पंजाब	211.76	193.91	287.67	260.94	116.13	106.33	157.75	1433.09
22.	राजस्थान	104.62	93.98	122.89	111.77	20.91	18.78	24.56	22.34
23.	सिक्किम	407.43	331.99	879.00	636.35	35.54	228.90	76.68	55.51
24.	तमिलनाडु	142.01	120.10	164.60	140.26	74.53	63.04	86.39	73.62
25.	त्रिपुरा	726.23	618.16	1135.59	990.61	253.76	214.25	396.80	346.14
26.	उत्तरप्रदेश	163.44	70.55	1181.25	85.23	137.97	59.55	153.00	17.95
27.	उत्तराखंड	152.99	121.36	200.35	156.71	28.56	22.66	37.40	29.125
28.	पश्चिम बंगाल	64.59	44.82	84.24	60.31	60.57	46.19	36.81	62.05
29.	चंडीगढ़	578.90	530.23	678.12	629.46	5895.61	54.00.00	6906.14	64.10

स्रोत : http//bprd.nic.in

6. जनता के कमजोर वर्ग, विशेषतौर से अनुसूचित जाति, जनजाति, महिलाएं और अल्पसंख्यकों को पुलिस का वैधानिक संरक्षण अवश्य मिलना चाहिए।

7. जनशक्ति, परिवहन, संचार व्यवस्था एवं फारेंसिक रसायनों में वृद्धि होनी चाहिए।

8. अधीनस्थ कर्मचारियों की आवासीय सुविधा पर विशेष ध्यान दिया जाए।

9. अधीनस्थ कर्मचारियों को कार्यकाल से कम-से-कम तीन प्रोन्नति अवश्य मिले।

10. किसी पुलिसकर्मी से बारह घंटे से ज्यादा ड्यूटी नहीं ली जानी चाहिए और यह अवधि भी कालांतर में घटाकर आठ घंटे की जाए।

11. पुलिस सुधार पर सुप्रीम कोर्ट के आदेशों का अनुपालन सुनिश्चित किया जाए। अधिनियम पारित करने वाले राज्यों के मानदंडों पर परीक्षण हो।

संदर्भ सूची

1. प्रकाश सिंह (पूर्व डीजीपी और पुलिस सुधार पर सुप्रीम कोर्ट में याचिकाकर्ता) 2012 चुनौती बदली, खाकी नहीं, राष्ट्रीय सहारा गोरखपुर।

2. जी.पी. जोशी (पूर्व निदेशक ब्यूरो आफ पुलिस रिसर्च एवं डेवलपमेंट) फलते-फूलते लोकतंत्र में औपनिवेशिक पुलिस राष्ट्रीय सहारा गोरखपुर।

3. दीप्ति श्रीवास्तव, 2009, 'पुलिस सुधार में नई दिशा दृष्टि की आवश्यकता', पुलिस विज्ञान पत्रिका, अप्रैल-जून, नई दिल्ली।

4. दीप्ति श्रीवास्तव, 2012 'पुलिस अधिकारियों की विभिन्न समस्या', पुलिस विज्ञान पत्रिका, अप्रैल-जून, नई दिल्ली।

5. http//bprd.nic.in

भारतीय फिल्मों में पुलिस की छवि

डा. सुरेंद्र कटारिया
प्रोफेसर (लोक प्रशासन)
81/91, मानसरोवर, जयपुर

गुवाहाटी में अखिल भारतीय पुलिस महानिदेशक—महानिरीक्षक सम्मेलन में बोलते हुए (30 नवंबर, 2014) प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने कहा कि हमारी फिल्मों में पुलिस की छवि ठीक नहीं दिखाई जाती है और इसे बदला जाना चाहिए। स्पष्ट है कि प्रधानमंत्री की यह चिंता न केवल पुलिस प्रशासन के आला अधिकारियों की भी चिंता है बल्कि संपूर्ण समाज भी फिल्मों की पुलिसिया छवि में बदलाव चाहता है। प्रश्न यह है कि क्या फिल्मों में अतिरेक है। यह सही है कि समाज में राई का पहाड़ बना दिया जाता है किंतु हमें यह भी याद रखना चाहिए 'राई' तो है, तभी पहाड़ बनाया जा सका।

दरअसल, फिल्में को समाज का आईना होती हैं अर्थात् समाज में जो कुछ घटित हो रहा होता है वह पटकथा एवं संवाद के माध्यम से फिल्मों में दिखाई देता है। जब हम बच्चे को डराने के लिए यह कहते हैं कि 'चुप हो जा नहीं तो पुलिस आ जाएगी' या पुलिस से दूरी रखने के लिए कहा जाता है 'अजी, पुलिसवालों से न तो दोस्ती अच्छी और न ही दुश्मनी अच्छी'। इसी तरह कहते हैं कि 'भगवान न करे कभी किसी को खाकी (पुलिस), काले कोट (वकील) तथा सफेद कोट (डाक्टर) से काम पड़े।'

अब वास्तविकता तो यह है कि स्वास्थ्य लाभ हेतु डाक्टर्स—नर्स से मिलना ही पड़ेगा तो न्याय-सुरक्षा पाने हेतु पुलिस-वकील-जज से भी वास्ता पड़ेगा ही। जनता से सीधे जुड़े सरकारी विभागों के साथ त्रासदी यह है कि कार्य बोझ से ग्रस्त ऐसी सेवाएं गैर जिम्मेदाराना समाज में सदैव ही शिकायतों एवं उलाहनों से भरी होती है तथा जनता की असंतुष्टि ही इन सेवाओं के बारे में सर्वाधिक चुटकुलों के अवसर भी पैदा करती है।

हिंदी फिल्मों में पुलिस

सामान्यतः भारतीय फिल्में नायक प्रधान होती हैं जिनमें खलनायक की अंततः हार तथा नायिका नाचने-गाने के लिए होती है। स्थिति यह है कि समस्त जुर्म तथा भ्रष्टाचार के खात्मे के लिए नायक जिम्मेदार होता है तथा पुलिस को अंतिम दृश्य में प्रतीकात्मक के रूप से दिखाया जाता है तथा निर्णायक सीमा तक पिट चुके खलनायक के लिए नायक या नायिका कहती है, "इंस्पेक्टर, गिरफ्तार कर लो इसे।" जैसे कि नायक या नायिका ही न्यायाधीश हैं तथा पुलिस के पास कोई स्वविवेक ही नहीं है।

हिंदी सिनेमा के तीन दशकों की फिल्मों में सर्वाधिक बार इंस्पेक्टर बनने का गिनीज बुक रिकार्ड अभिनेता जगदीश राज (144 फिल्में) के नाम है तथा पुलिस आफिसर भूमिका में सर्वाधिक बार इफ्तेखार खान दिखाई दिए हैं। यूं तो सभी बड़े तथा चर्चित अभिनेताओं ने पुलिस की भूमिका में काम किया है तथा अधिकांश बार बड़े हीरों ने पुलिस कार्मिक के रूप में दबंग छवि दिखाई है किंतु जब पुलिसकर्मी की भूमिका में हास्य अभिनेता जैसे—असरानी, कैश्टो मुखर्जी, जॉनी वाकर, महमूद, जानी लीवर, शक्ति कपूर, आई.एस. जौहर, कादर खान, मुकरी, जगदीप, भगवान दादा, राजेंद्र नाथ, देवेन वर्मा, रूपहले पर्दे पर दिखाई दिए हैं तो पुलिस को भी दीन-हीन एवं मजाकिया बनाकर प्रस्तुत किया गया है।

वैसे भी साधारणतया कांस्टेबल को हिंदी फिल्मों में मजाक का पात्र ही बनाया जाता रहा है जो प्रायः गाली बकने वाला, तम्बाकू खाने एवं शराब पीने वाला, औरतों की तरफ घूरने वाला, बाजार में हफ्ता वसूली करने

वाला, ड्यूटी पर नींद निकालने वाला, थुलथुला शरीर या तोंद लटकाए टहलने वाला, चोर, डकैत या हीरों की बातों में आकर आसानी से धोखा खाने वाला तथा सामान्य समझ से दूर दिखाई देता है।

यह बहुत ही विचित्र बात है कि फिल्मी पटकथाओं में यदि हीरो के पास पुलिसकर्मी की भूमिका है तो वह हीरोइन के साथ नाचने-गाने का कार्य भी करता है किंतु वही हीरो इंजीनियर, वकील, डाक्टर तथा प्रोफेसर की भूमिका में अधिक संजीदा दिखाया जाता है। जहां तक पुलिस के रोल पर केंद्रित फिल्मों की बात है उनमें चर्चित तथा सफल फिल्मों में सलमान खान की 'दबंग' तथा 'दबंग-2', अमिताभ बच्चन की 'जंजीर', आमिर खान की 'तलाश' तथा 'सरफरोश', शशि कपूर की 'दीवार', अभिषेक बच्चन की 'धूम', नाना पाटेकर की 'अब तक छप्पन', ओमपुरी की 'अर्धसत्य', अक्षय कुमार की 'खाकी', मनोज वाजपेयी की 'शूल' अजय देवगन की 'सिंघम' तथा 'गंगाजल', अरशद वारसी की 'सहर', जैकी श्रॉफ की 'गर्दिश' तथा रानी मुखर्जी की 'मर्दानी' इत्यादि प्रमुख मानी जाती हैं।

अकेले अमिताभ बच्चन की 10 सफल फिल्में पुलिस भूमिका से संबंधित हैं जिनमें 'जंजीर' (1973), 'द ग्रेट गैम्बलर' (1979), 'राम बलराम' (1980), 'गिरफ्तार' (1985), 'शहंशाह' (1988), 'अकेला' (1991), 'इंसानियत' (1994), 'बड़े मियाँ छोटे मियां' (1998), 'देव' (2004) तथा 'बंटी और बबली' (2005) सम्मिलित हैं।

विडंबना यह है कि 'थानेदार' फिल्म का हीरो संजय दत्त खिलंदड़ है, किंतु उपहास पुलिस इंस्पेक्टर का हो रहा है। वहीं फिल्म 'शहंशाह' में इंस्पेक्टर विजय श्रीवास्तव कानूनी रूप से कुछ करने में असमर्थ है, अतः वह रात के अंधेरे में भेष बदल कर बुराई समाप्त करने का मार्ग चुनता है तथा हर बार अपना परिचय यूं देता है, "रिश्ते में तो हम तुम्हारे बाप हैं, नाम है शहंशाह।" फिल्म 'प्रतिज्ञा' (1975) में तो एक शरारती तत्व इंस्पेक्टर को मारकर उसके स्थान पर पद ग्रहण कर लेता है तो देशी शराब ठेके के स्थान पर 'देशी पुलिस चौकी' स्थापित कर देता है। इसी तरह 'पुलिसगीरी' (2013) फिल्म में भी हास्य को प्रधानता प्रदान की गई है।

कई फिल्में ऐसी भी रही हैं जिनके पोस्टर्स ही पुलिस कार्यशैली को उभारते हैं। जैसे 'गर्दिश' (1993) के पोस्टर पर लिखा गया था—'Wanted to be a man of Law, Now wanted by the law.' यह पोस्टर तंत्र की कमियों को बताता है तो दूसरी ओर मुंबई पुलिस के चर्चित सटीक निशानेबाज तथा एनकाउंटर विशेषज्ञ दया नायक के जीवन पर आधारित फिल्म 'अब तक छप्पन' (2004) के पोस्टर पर लिखा गया था—'जमादार घर का कचरा साफ करता है, मैं सोसाइटी का।'

सन 2014 में प्रदर्शित 'मर्दानी' फिल्म मूलतः बालिकाओं के अवैध व्यापार पर केंद्रित थी जिसमें रानी मुखर्जी ने अत्यंत सशक्त अभिनय कर पुलिसकर्मियों के प्रति सम्मान का भाव उत्पन्न करवाया। इस कसी हुई फिल्म के एक दृश्य में वह कहती है—"हम पुलिसवालों को तुम जितना समझते हो, उतने हम हैं नहीं।" और पूरा हाल पुलिस की सफलता से गूंज उठता है।

हिंदी फिल्मों के चर्चित संवाद

"जब तक बैठने को ना कहा जाए शराफत से खड़े रहो... ये पुलिस स्टेशन है तुम्हारे बाप का घर नहीं।"

—जंजीर (1973)

"हम अंग्रेजों के जमाने के जेलर हैं।"

—शोले (1975)

"आप पुलिस आफिसर नहीं फुलिश आफिसर हो।"

—गोलमाल (1979)

"डान का इंतजार तो ग्यारह मुल्कों की पुलिस कर रही है।"

—डान (1978)

"झक मारती है पुलिस, उतार के फेंक दो ये वर्दी

और पहन लो बलवंत राय का पट्टा गले में...।"

—घायल (1990)

"सच्चे पुलिस वाले की या तो मौत होती है या वो सस्पेंड किया जाता है।"

—तिरंगा (1992)

"ये देश दो ही लोगों पर हंसता है... हिजड़ों पर और हम पुलिसवालों पर... क्यूं कि ना तो वो कुछ कर सकते हैं और ना ही हम कुछ कर सकते हैं।"

—दिलवाले (1994)

"पुलिस के इंसाफ और जुर्म में फर्क नहीं होता।"

—जीत (1996)

"गुंडे और गुंडागर्दी यहीं से जन्म लेती हैं—जिसे आप पुलिस स्टेशन कहते हैं।"

—कहर (1997)

"समाज को पुलिस वैसी ही मिलती है जैसा कि समाज खुद होता है।"

—गंगाजल (2003)

"कैंडिल की रोशनी में तेरी आंखें ऐसी लगती हैं जैसे पुलिस जीप की हेड लाईट।"

—वन्स अपोन ए टाइम इन मुंबई दोबारा (2012)

"सच्चे पुलिस आफिसर की वर्दी भी अपनी ड्यूटी निभाती है।"

—राउड़ी राठौड़ (2012)

"पुलिसवालों की ना दोस्ती अच्छी ना दुश्मनी... तूने तो दोनों ही कर ली।"

—सिंघम (2013)

कई फिल्में तो नाम से ही स्पष्ट हैं कि उनमें पुलिस की भूमिका है, जैसे— 'पुलिस-पब्लिक' (1990), 'पुलिस और मुजरिम' (1992), 'पुलिस आफिसर' (1992), 'पुलिसवाला गुंडा' (1995), 'पुलिस फोर्स' (2004), 'नाकाबंदी' (1990), 'सत्यमेव जयते' (1987), 'खाकी' (2004), 'शूटआउट एट वडाला' (2013), 'चोर पुलिस' (1983), 'मुंबई की किरण बेदी' (कन्नड़ फिल्म, 2012), 'वर्दी' (1989), 'तिरंगा' (1992), 'थानेदार' (1990), 'जनता हवलदार' (1979), 'तू चोर मैं सिपाही' (1996), 'जख्मी सिपाही' (2001), 'हिंदुस्तानी सिपाही' (2002) तथा 'शक्ति' (1982) प्रमुख हैं। अन्य पुलिस विषयक प्रसिद्ध फिल्मों में 'कर्मा' (1986), 'कर्तव्य' (1979), 'गर्व' (2004), 'मोहरा' (1994), 'राम लखन' (1989), 'ए वेडनस्डे' (2008), 'मिशन कश्मीर' (2000), 'गुप्त' (1997), 'कम्पनी' (2002), 'डिपार्टमेंट' (2012) तथा मलयालम फिल्म 'मुंबई पुलिस' (2013) सम्मिलित हैं।

हाल ही के वर्षो में पुलिस विषयक लोकप्रिय फिल्मों में 'दबंग' सर्वोच्च शिखर पर है जो सलमान खान की नायकी तथा शारीरिक सौष्ठव के साथ-साथ इंस्पेक्टर चुलबुल पांडे की बचकाना एवं साहसी हरकतों से दर्शकों का भरपूर मनोरंजन करती है किंतु थाने में पाण्डेजी शराब पीते हैं, डांस करते हैं तथा सीटी बजाते हैं तो सीधे-सीधे पुलिस की छवि पर नकारात्मक प्रभाव अधिक पड़ता है।

इसी तरह भारतीय फिल्मों में दिखाये जानेवाले अदालती दृश्य भी जनता को भ्रमित करते हैं। अदालत में एक कटघरे में वादी तथा दूसरे में प्रतिवादी और आमने-सामने बहस अवास्तविक चित्रण है। उस पर भी न्यायिक कार्रवाई के बीच में 'ठहरिए जज साहब' कहकर एक नया दृश्य उत्पन्न करना यथार्थ से कोसों दूर है, क्योंकि वास्तविक जीवन में जब पुलिस अन्वेषण करने, चालान पेश करने तथा सम्मन तामील कराने में जरूरी वक्त लगाती है तो लोगों को धक्का पहुंचता है, क्योंकि फिल्मी दृश्य मानव मन के अवचेतन में गहराई तक बैठ जाते हैं।

वैसे भी फिल्मी पुलिस यथार्थ की पुलिस से भी खराब दिखाई देती है। कई फिल्मों में एस.पी. तथा आई.जी. भी थाने में तैनात दिखाए जाते हैं। पुलिस 'इनसाईनिया' तथा वर्दी की गलती भी खूब होती हैं।

कैसे सुधरे छवि

यह सही है कि फिल्में समाज का दर्पण हैं, अतः दर्पण की बार-बार सफाई करने के बजाए चेहरे की धूल हटाना प्रभावी समाधान है। स्मार्ट पुलिस के निर्माण के लिए एक ऐसी ठोस पुलिस-सुधार एवं आधुनिकीकरण नीति की जरूरत है जो स्मार्ट पुलिस के निहितार्थ (प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी का सपना), अर्थात् एस.—स्ट्रिक्ट एंड सेंसिटिव, एम.—मॉडर्न एंड मोबाइल, ए.—अलर्ट एंड अकाउंटेबल, आर.—रिलायबल एंड रेस्पोंसिव तथा टी.—टेक्नोसेवी एंड ट्रेंड को साकार कर सके। इस हेतु सर्वप्रथम इस बात का आकलन करना होगा कि आमजन पुलिस से सबसे ज्यादा कौन-सी अपेक्षाएं करता है। निसंदेह घर-गली, मोहल्ले की कानून-व्यवस्था प्रथम अपेक्षा होती है तथा दूसरी अपेक्षा यह कि जब पीड़ित थाने पहुंचे तो उसकी पीड़ा सुनी जाए तथा एफ.आई.आर. दर्ज हो जाए।

इसके बाद हर कोई चाहता है कि उसे बार-बार थाने नहीं जाना पड़े तथा निर्दोष को भी पुलिस की प्रताड़ना का सामना नहीं करना पड़े। भ्रष्टाचार और भारतीय पुलिस एक-दूसरे के पर्यायवाची बन चुके हैं। थाने में जाते ही यदि पुलिस अधिकारी वादी से कागज, कार्बन, चाय, सिगरेट तथा शराब मांगते हों तो स्थिति सचमुच विकट नजर आती है।

स्मार्ट पुलिस का निहितार्थ

वर्ण	अर्थ
S	Strict and Sensitive (सख्त एवं संवेदनशील)
M	Modern and Mobile (आधुनिक एवं गतिशील)
A	Alert and Accountable (सतर्क एवं जवाबदेय)
R	Reliable and Responsive (विश्वसनीय एवं अनुक्रियाशील)
T	Technosavy and Trained (तकनीकी दक्ष एवं प्रशिक्षित)

किसी भी व्यक्ति की प्रथम छवि उसकी शारीरिक संरचना, पहनावे तथा बोल-चाल से बनती है। इस मामले में हमारी पुलिस दोनों तरह से चिंतनीय है। एक-तिहाई पुलिस कांस्टेबल कुपोषण के शिकार, शराबी, दीन-हीन तथा निस्तेज नजर आते हैं, तो एक-तिहाई भारी तोंद लिए हंसी के पात्र बने हुए हैं। बचे हुए एक-तिहाई कार्य के बोझ से दबे हैं। पुलिस तथा टी.बी. नामक बीमारी का संबंध कितना घनिष्ठ है, इसका उदाहरण यह है कि जयपुर के सरकारी टी.बी. अस्पताल में एक वार्ड पृथक से पुलिसकर्मियों हेतु बना हुआ है। अतः पुलिसकर्मियों को श्रेष्ठ मैस, भत्ता, अवकाश तथा सभी सुविधाएं भरपूर दी जानी चाहिए और इसके बाद मानव व्यवहार तथा जनसंपर्क की साफ्ट स्किल ट्रेनिंग दी जाए। पुलिस तंत्र को जितना अधिक ई-गवर्नेंस से जोड़ा जाएगा उतना ही पुलिस के लिए भी हितकर होगा। पुलिस को जनता का विश्वास जीतना होगा जो कि कठिन मेहनत तथा प्रतिबद्धता से प्राप्त होगा। पुलिसकर्मी के परिवार के स्वास्थ्य तथा शिक्षा को सरकार को सुनिश्चित करना होगा ताकि वे मन लगाकर ड्यूटी कर सकें।

पुलिस के कार्य का अंतिम परिणाम अपराधी को सचमुच सजा होने पर सामने आता है। विडंबना यह है कि यह कार्य शिथिल तथा लचर न्यायिक प्रणाली के कारण बरसों तक नहीं हो पाता है तथा जमानत पर छूटे अपराधी पुलिस का सिरदर्द बढ़ाते हैं। ऐसे में यह आवश्यक है कि तत्काल न्यायिक सुधार करते हुए प्रत्येक मुकदमे के निस्तारण की अवधि निश्चित कर देनी चाहिए। भारत में अभी एक मुकदमे की औसत उम्र 13 वर्ष है। इतने वर्षों में परिवार, समाज तथा घटना का परिदृश्य ही बदल जाता है। फिल्मों में पुलिस पर पड़नेवाले राजनीतिक दबाव को बहुत ही प्रभावी ढंग से दिखाया जाता रहा है। राजनीतिक दबाव से पुलिस की मुक्ति का कार्य विधायिका का है, अतः राजनीतिक शुचिता के लिए लोकपाल संस्था की प्रभावी क्रियान्विति

आवश्यक है। समाज का नजरिया भी चिंताजनक है। गाहे-बगाहे लोग अपने परिचित राजनेताओं से पुलिस को फोन कराते हैं। यहां तक कि हैलमेट न पहनने के चालान पर भी मंत्री जी फोन कर देते हैं। इस प्रवृत्ति पर रोक तभी लगेगी जब लोग अपने नागरिक कर्तव्यों को समझेंगे।

कन्या भ्रूण हत्या : जिम्मेदार कौन?

श्रीमती वीणा पाठक
द्वारा पुस्तक सदन प्रकाशन
नजूल शॉप नं.-4, सरोजिनी नायडू मार्ग
सिविल लाइंस
इलाहाबाद-211002 उ.प्र.

गणतंत्र दिवस के अवसर पर हमारे प्रधानमंत्री जी ने 'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ' नामक योजना की शुरुआत की। बेटियों को बचाने की योजना शुरू करने से यह साफ है कि देश में बेटियों की संख्या निरंतर घट रही है। प्रधानमंत्री जी ने इस योजना की शुरुआत हरियाणा राज्य से की जहां बेटियों की संख्या बहुत ही कम है और दिन-प्रतिदिन कम होती जा रही है। इसका कारण हरियाणा में बेटियों को बोझ और विपत्ति समझा जाना है। पंजाब, हरियाणा व उत्तराखंड भारत के ऐसे राज्य हैं, जहां प्रति हजार पुरुषों पर महिलाओं की संख्या 900 से भी कम है।

इसका कारण लड़कियों के पालन-पोषण, उनकी सुरक्षा की समस्या तथा उनके विवाह करने में आनेवाली दहेज की कुप्रथा है। पंजाब तथा हरियाणा में तो लड़कियों को मुसीबत ही समझा जाता है। उधर एक प्रचलित मुहावरा है जो लड़कियों के प्रति उन लोगों की खराब भावना व संवेदनहीनता को उजागर करता है। यह मुहावरा है—

बे मारे बेटी मुये, ठाढ़े उख बिकाय,
बिन ब्याही बेटी मरे, तीनों बलाय जाय।

भारत में लड़कियों के प्रति इस संवेदनहीनता में आर्थिक पक्ष ही प्रमुख नजर आता है। इसके अलावा लड़कियों को पग-पग पर सुरक्षा भी देनी पड़ती है तथा उनकी शिक्षा से लेकर उनके हाथ पीले करने तक माता-पिता को अतिरिक्त श्रम, धन तथा समय व्यय करना पड़ता है।

भारत में स्त्री-पुरुष के बीच असमानता भी बहुत है। विश्व आर्थिक मंच ने वर्ष 2014 में स्त्री-पुरुष असमानता का सूचकांक जारी किया है। उसमें दुनिया के 142 देशों में भारत का 114 वां स्थान है। स्पष्ट है कि भारत में महिलाओं की स्थिति अच्छी नहीं है।

भारत जैसे देश में जहां नारी को पूजने की परंपरा रही है, मां को स्वर्ग से भी ऊपर का आसन दिया गया है, वहां की धरती पर कन्या भ्रूण की हत्या बड़े पैमाने पर की जा रही है। भारत सरकार के केंद्रीय सांख्यिकी संगठन (सी.एस.ओ.) की एक रिपोर्ट में कहा गया है कि वर्ष 2001 से वर्ष 2005 के दौरान प्रतिवर्ष लगभग 6,82,000 कन्या भ्रूण हत्या हुई हैं। प्रतिदिन का औसत करीब 1800 से 1900 तक भ्रूण हत्याओं का है। यह सरकारी आंकड़ा है, वास्तविक स्थिति इससे कहीं विकराल व भयावह है।

जनसंख्या के आंकड़ों पर गौर करें तो वर्ष 1901 की जनगणना में प्रति हजार पुरुषों पर 972 स्त्रियां थीं। वर्ष 1991 की जनगणना में यह आंकड़ा 927, वर्ष 2001 में यह आकंड़ा 933 तथा वर्ष 2011 में यह 943 तक आ गया है। पंजाब, हरियाणा, सिक्किम, जम्मू-कश्मीर, अण्डमान-निकोबार द्वीप-समूह, दिल्ली व चण्डीगढ़ में यह संख्या 900 के नीचे है तथा दादरा और नगर हवेली में तो 800 के नीचे और दमन एवं दीव में यह 700 के नीचे है। स्पष्ट है कि लड़कियों को जन्म देने के प्रति लोगों का रूझान कम है तथा कन्या भ्रूण हत्या जारी है।

भारत में कन्या भ्रूण हत्या को सदा से ही एक सामाजिक, नैतिक एवं विधिक अपराध माना गया है। हमारे धार्मिक ग्रंथों जैसे—भागवद्, रामचरित मानस, पुराण आदि में कन्या भ्रूण हत्या को जघन्य अपराध की संज्ञा दी गयी है। रामचरित मानस का एक श्लोक है—

"यत्पापं ब्रह्महत्याया द्विगुण गर्भपातने।
प्रायश्चित्तं न तस्यास्ति तस्यास्तमाओं विधियते।।"
—मानस 4120

अर्थात् ब्रह्महत्या से जो पाप लगता है, उससे दोगुना पाप गर्भपात करने से लगता है, उसमें भी विशेषरूप से कन्या का गर्भपात, जिसका कोई प्रायश्चित्त नहीं है।

यूनिसेफ द्वारा प्रकाशित एक रिपोर्ट के मुताबिक देश में प्रति वर्ष पांच लाख कन्या भ्रूण हत्याएं होती हैं। यही कारण है कि वर्ष 1991 के बाद से देश के 80 प्रतिशत जिलों में लिंगानुपात तेजी से पुरुषों की ओर झुका है। आंकड़ों को देखने से यह बात स्पष्ट हुई है कि जो राज्य भौतिक दृष्टि से संपन्न या थोड़ी अच्छी स्थिति में हैं, वहां जनसंख्या में स्त्री-पुरुष अनुपात की स्थिति ठीक नहीं है। जैसे पंजाब में प्रति हजार पुरुषों पर 895 स्त्रियां, हरियाणा में 879 स्त्रियां, दिल्ली में 868 स्त्रियां, चंडीगढ़ में 818 स्त्रियां आदि। (देखें पृ. 24, बाक्स-1)। कन्या भ्रूण हत्या के पीछे जो महत्वपूर्ण कारण हैं, वे निम्न प्रकार हैं—

1. पितृसत्तात्मक मानसिकता एवं पुरुष प्रधान समाज।

2. पुत्र प्राप्ति के बिना मोक्ष न प्राप्त होने की मिथ्या धारणा।

3. विवाहरूपी बंधन।

4. समाज में फैली दहेज की कुरीति।

5. पुत्र द्वारा कुछ सांसारिक औपचारिकताओं को निभाना जैसे—पिंडदान करना, मुखाग्नि देना आदि।

6. कन्या का पराया धन होना।

7. उत्तराधिकार में पुरुषों को ही हिस्सा दिया जाना।

8. पिता की वृद्धावस्था में पुत्र द्वारा संरक्षण प्रदान किया जाना।

9. सभी रीति-रिवाज, धार्मिक अनुष्ठान और लोक विश्वास का पुरुषों के पक्ष में झुका होना।

10. पुत्र को कुलदीपक, वंशवाहक, चिता को अग्नि देनेवाला मानना।

इनके अतिरिक्त हमारी मानसिकता, हमारी भावना भी पुत्र मोह से ही बंधी हुई है। बहू को सदैव 'पुत्रवती भव' का ही हम आशीर्वाद देते हैं। सभी मंगल गीत लड़के के जन्म के लिए गाए जाते हैं। पत्नी पति की दीर्घायु के लिए तथा मां पुत्र की दीर्घायु के लिए व्रत-उपवास रखती है। प्रश्न यह उठता है कि क्या पत्नी की दीर्घायु और स्वस्थ होने तथा पुत्री के कल्याण की कामना करने की कोई जरूरत नहीं है? जब हम स्वयं ही तथा महिलाएं भी पुत्री के प्रति निर्मोही हैं तो कहां से कन्या भ्रूण की रक्षा हो सकेगी।

गुरुदेव रवींद्रनाथ ठाकुर ने कहा था, "इस पृथ्वी पर आनेवाला प्रत्येक शिशु यह संदेश लेकर आता है कि ईश्वर मानव से निराश नहीं है, लेकिन बालिका-शिशु की विचित्र स्थिति यह है कि जन्म से पहले ही घृणा, उपेक्षा और भेदभाव के तहत उसका दमन कर दिया जाता है। उसे इस संसार में आकर अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष करने तक का मौका नहीं दिया जाता है।"

ऐसा नहीं है कि बालिकाओं की हत्या की प्रथा कोई नई है। यह प्राचीन काल से ही चली आ रही है। पहले जन्म के बाद हत्या की जाती थी और अब गर्भ में ही बालिका भ्रूण को नष्ट कर दिया जा रहा है। पहले बालिका की हत्या के लिए अमानवीय और क्रूर कृत्य, जैसे मां के स्तनों पर अफीम लगा देना, बच्ची के मुंह में आंवला रख देना, बच्ची को भूखा रखना, उसका गला घोंट देना, उसे पानी भरी बाल्टी में डाल देना आदि अपनाए जाते थे, पर अब यह प्रक्रिया वैज्ञानिक ढंग से दवाओं के सहारे ही संपादित कर दी जाती है। आज तमाम क्लिनिक 'आज 500-1000 रुपये देकर कल भारी दहेज से बचें' का स्लोगन लिखकर कन्या भ्रूण हत्या का छद्म प्रचार कर रही हैं।

कन्या भ्रूण हत्या के निम्न परिणाम हो रहे हैं—

1. नर और मादा के लिंगानुपात में असंतुलन।

2. महिलाओं की कमी के कारण श्रमिक शक्ति में कमी, जिससे देश को आर्थिक क्षति।

3. महिलाओं के प्रति अपराधों में वृद्धि।

4. महिलाओं की तस्करी, खरीद-फरोख्त में वृद्धि।

5. एक स्त्री कई मर्दों की संगिनी।

6. महिलाओं के प्रति बढ़ते अपराध से सामाजिक अराजकता का खतरा।

7. सामाजिक असंतुलन।

कन्या भ्रूण हत्या और कानूनी उपबंध

अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर संयुक्त राष्ट्र संघ ने महिलाओं के प्रति भेदभाव की समाप्ति के लिए उसके उन्मूलन पर अंतर्राष्ट्रीय अभिसमय (CEDAW) 1997 तथा बच्चों के अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र अभिसमय (1989) बनाया है। इन अभिसमयों में महिलाओं के प्रति सभी प्रकार के भेदभाव को परिभाषित करते हुए उनके उन्मूलन के लिए सार्थक कदम भी बनाए गए हैं।

भारत में सबसे महत्वपूर्ण विधायी उपबंध भारतीय दंड संहिता 1960 के अंतर्गत बनाया गया है। भारतीय दंड सहिता की धारा 312 से लेकर धारा 315 तक में गर्भपात और उससे संबंधित उपबंध किए गए हैं। भारतीय दंड संहिता के अंतर्गत ऐसे गर्भपात को, जो स्त्री का जीवन बचाने के लिए सद्भावनापूर्वक नहीं किया गया हो, एक दंडनीय अपराध माना गया है। चाहे वह अपराध किसी भी कारण से गर्भवती स्त्री की सहमति के बिना किया गया हो। भारतीय दंड संहिता किसी व्यक्ति को ऐसे किसी भी प्रकार के कार्य को, जो किसी बच्चे के जन्म लेने में किसी भी प्रकार की बाधा उत्पन्न करता है, को दंडनीय अपराध घोषित करती है तथा ऐसा अपराध करने वाले व्यक्ति को दंडित करने का प्रावधान करती है।

यद्यपि भारतीय दंड संहिता में गर्भपात को एक दंडनीय अपराध माना गया है परंतु गर्भ का चिकित्सीय समापन अधिनियम 1971 (The Medical Termination of Pregnancy Act, 1971), जो समाज के संतुलन को तबाह कर देने वाली भ्रूण हत्या की समस्या से निपटने के लिए बनाया गया है, कुछ परिस्थितियों में गर्भपात की अनुमति देता है। ये परिस्थितियां निम्नवत् हैं—

1. यदि गर्भावस्था का जारी रहना गर्भवती स्त्री के जीवन के लिए खतरनाक हो या इसके कारण भविष्य में उस स्त्री को शारीरिक या मानसिक तौर से क्षति होना संभव हो,

2. यदि गर्भस्थ शिशु के शारीरिक या मानसिक रूप से विकलांग होने की संभावना हो,

3. यदि स्त्री अपनी इच्छा के विरुद्ध (अवांछनीय कारणों से, जैसे—बलात्कार इत्यादि) गर्भवती हुई हो,

4. यदि परिवार नियोजन के उपाय विफल हो जाएं।

इस अधिनियम की सबसे उल्लेखनीय बात यह है कि यह मां को अधिकार नहीं देता है कि वह गर्भपात कराए या नहीं, इस बात का निर्धारण करे। यह पूर्णतया पंजीकृत चिकित्सक द्वारा ही निर्धारित किया जाएगा।

वर्ष 2002 में इस अधिनियम से भी कन्या भ्रूण हत्या की रोकथाम न होते देख इसमें दंड का प्रावधान किया गया। कन्या भ्रूण का गर्भपात करवाने वालों और करनेवालों को 2 से 7 वर्ष तक के कठोर कारावास के दायरे में लाया गया।

गर्भ का चिकित्सीय समापन अधिनियम 1971 कन्या भ्रूण हत्या पर अंकुश लगाने में विफल रहा। इस पर विवश होकर सरकार को प्रसव पूर्व नैदानिक तकनीक का उपयोग कर भ्रूण के लिंग की जांच तथा कन्या भ्रूण हत्या के प्रतिषेध हेतु प्रसव पूर्व नैदानिक तकनीक (नियमन एवं दुरुपयोग की रोकथाम) अधि., 1994 बनाना पड़ा जो 1 जनवरी, 1996 से प्रवृत्त हुआ।

इस अधिनियम का मुख्य उद्देश्य प्रसव पूर्व निदान तकनीकी के इस्तेमाल पर विनियमन एवं दुरुपयोग की रोकथाम है। साथ ही प्रसव पूर्व लिंग की जांच एवं कन्या भ्रूण हत्या को रोकना है। इस अधिनियम में दंड का प्रावधान किया गया है, लेकिन इसमें काफी खामियां थीं।

इस अधिनियम में भ्रूण परीक्षण पर रोक लगाई गई, लेकिन गर्भधारण से पहले ही लड़की को जन्म न देने की तकनीक इसके दायरे में नहीं थी जिस कारण यह अधिनियम बालिका भ्रूण हत्या रोकने में एकदम विफल साबित हुआ और इसमें एक भी व्यक्ति को मुकदमे में सजा नहीं मिल पायी।

इस अधिनियम की विफलता तथा कन्या भ्रूण हत्या पर प्रभावी अंकुश न लगते देख सरकार ने वर्ष 1994 के मूल अधिनियम को वर्ष 2002 में संशोधित कर दिया तथा अधिनियम का नाम बदलकर गर्भधारण—पूर्व एवं प्रसव—पूर्व नैदानिक (लिंग चयन निषेध) अधिनियम, 2002 कर दिया, जो 14 फरवरी, 2003 से लागू हुआ। इस अधिनियम के विशेष प्रावधान निम्न प्रकार हैं—

1. यह अधिनियम प्रसव पूर्व शिशु का लिंग परीक्षण करने अथवा किसी भी रूप में सहायता का निषेध करता है।

2. परंतु कुछ विशेष परिस्थितियों में यह अधिनियम प्रसव पूर्व भ्रूण की जांच की अनुमति प्रदान करता है, जो निम्न है—

i. गुणसूत्रों की असमानता।

ii. आनुवांशिक शारीरिक बीमारियां

iii. हीमोग्लोबिन संबंधी

iv. लिंग संबंधी आनुवांशिक बीमारियां

v. जन्मजात असमानताएं

vi. केंद्रीय सलाहकार बोर्ड द्वारा बताई गई कोई अन्य असमानताएं अथवा बीमारी के परीक्षण आदि के मामलों में।

3. क्लिनिकों, पैथोलोजी (अल्ट्रासाउंड) को इस उद्देश्य से जांच करने का प्रतिबंध, जिससे लिंग को जाना जा सके।

4. लिंग की जांच हेतु प्रचार-प्रसार का प्रतिबंध (इसमें इलेक्ट्रॉनिक तथा प्रिंट मीडिया आदि भी शामिल है। ऐसा करने पर तीन वर्ष तक के करावास व दस हजार रुपये तक के जुर्माने का प्रावधान है)।

5. सभी अल्ट्रासाउंड मशीनों का रजिस्ट्रेशन आवश्यक और सभी चीजों की फाइल रखना अनिवार्य।

6. योग्य विशेषज्ञों को ही प्रसवपूर्ण निदान तकनीक के प्रयोग की अनुमति, लेकिन उन्हें भी इसके इस्तेमाल के पूर्व लिखित कारण बताया जाना अनिवार्य है।

योग्य विशेषज्ञों द्वारा निम्न परिस्थितियों में ही प्रसवपूर्व निदान तकनीक का प्रयोग किया जा सकता है—

क. गर्भ धारण करने वाली महिला 35 वर्ष से ज्यादा की हो।

ख. गर्भ धारण करने वाली महिला को दो या दो से अधिक बार गर्भपात हो गया हो।

ग. गर्भ धारण करने वाली महिला का पारिवारिक इतिहास अस्वस्थ मानसिक विलंबन या शारीरिक अनियमितता या अन्य कोई जेनेटिक बीमारी का हो।

घ. केंद्रीय सलाहकार बोर्ड के द्वारा आवश्यकतानुसार कोई अन्य शर्तें।

इस अधिनियम के प्रावधानों के उल्लंघन के लिए भारी दंड का भी प्रावधान है। लिंग निर्धारण के कार्यों में लिप्त पायी जानेवाली क्लिनिक के लाइसेंस निरस्तीकरण तथा उपकरण आदि की जब्ती का प्रावधान है तथा ऐसे व्यक्ति के लिए, जो लिंग निर्धारण के कार्य में लिप्त पाया जाता है एक लाख रुपये के जुर्माने तथा उसका रजिस्ट्रेशन रद्द करने का भी प्रावधान है। इस अधिनियम की धारा 27 के अनुसार इसके तहत प्रत्येक अपराध संज्ञेय और गैर जमानती है।

भ्रूण की रक्षा के लिए भारतीय संविधान के अनुच्छेद-21 के तहत एक मूल अधिकार है। उच्चतम न्यायालय ने मेनका गांधी बनाम भारत सरकार, ए.आई.आर. 1978 एस.सी. 597 प्रकरण में निर्णय देते हुए कहा कि अनुच्छेद-21 के अंतर्गत जीने का अधिकार में भ्रूण के जीवन की सुरक्षा भी शामिल है।

हमारी दंड प्रक्रिया संहिता, 1873 की धारा 416 भी भ्रूण की रक्षा का प्रावधान करती है। इसके अंतर्गत प्रावधान है कि यदि गर्भवती महिला को सजा होती है तो उसकी सजा को टाला जा सकता है या मृत्यु दंड को आजीवन कारावास में बदला जा सकता है। इसके अतिरिक्त न्यूक्लियर इंस्टालेशन एक्ट, 1865 में भी यदि अजन्मे बच्चे को भी नाभिकीय मामलों की वजह से या आयनित किरणों के द्वारा कोई क्षति होती है तो इस अधिनियम के अंतर्गत उसकी क्षतिपूर्ति का प्रावधान किया गया है

उपरोक्त दोनों विधियों में यद्यपि कन्या भ्रूण की बात नहीं की गयी है, लेकिन इससे यह सिद्ध होता है कि भारतीय विधियां भ्रूण को पूर्णतः सुरक्षा प्रदान करती हैं।

कन्या भ्रूण हत्या की गतिविधियां अभी भी गुप-चुप जारी हैं। इस पर आज तक प्रभावी अंकुश नहीं लग पाया है। कठोर कानून के अभाव में इस प्रथा पर रोक लगा पाना मुश्किल बना हुआ है। इसी को देखते हुए कांग्रेस के अधीर रंजन चौधरी ने लोकसभा में “कन्या शिशु हत्या निवारण विधेयक, 2014” पेश किया है, जिसके कारणों एवं उद्देश्यों में कहा गया है कि देश में अभी भी जारी दहेज प्रथा के अभिशाप की वजह से किसी भी साधारण परिवार में कन्या का जन्म अशुभ और शाप समझा जाता है। बालिका का जन्म गरीब परिवारों द्वारा बोझ समझा जाता है। इन्हीं सब बातों के चलते देश में व्यापक रूप से प्रचलित कन्या शिशु हत्या के मामलों में कई गुना वृद्धि हुई है।

इस गैर सरकारी विधेयक में कन्या शिशु हत्या को गैर जमानती बनाने का प्रस्ताव किया गया है। विधेयक के प्रावधानों में कहा गया है कि “यदि बालिका की मृत्यु के कारण के संबंध में प्रारंभिक जांच के बाद कोई व्यक्ति शिशु हत्या का अपराधी पाया जाता है, तो उसे तत्काल हिरासत में लिया जाना चाहिए। विधेयक में इस अपराध को गैर जमानती अपराध बनाये जाने के साथ ही दोषियों के लिए दस वर्ष के कारावास और एक लाख रुपये के जुर्माने की सजा का प्रावधान किया गया है। इसके साथ ही कहा गया है कि ऐसे मामलों में कन्या शिशु की हत्या की जांच तथा अदालत में रिपोर्ट या वाद प्रस्तुत करने का काम बालिका की मौत की तारीख से तीन महीने की अवधि के भीतर पूरा कर लिया जाना चाहिए। इसमें जरा-सी भी कोताही न बरती जाए।”

कन्या को बचाने के लिए तथा कन्या शिशु के प्रति लोगों में रुझान बढ़ाने के लिए कई सरकारों ने विभिन्न स्कीमें चलाई हैं। हरियाणा सरकार ने गिरते लिंगानुपात को रोकने के लिए लाडली स्कीम, हिमाचल प्रदेश सरकार ने “बेटी है अनमोल” स्कीम, उत्तरांचल सरकार ने “नंदा देवी कन्या स्कीम” तथा हाल ही में केंद्र सरकार ने “बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ” स्कीम लांच की है।

माननीय उच्चतम न्यायालय ने भी कन्या भ्रूण हत्या को रोकने के लिए राज्य सरकारों की निष्क्रियता पर रोष व्यक्त करते हुए कहा है कि राज्यों के द्वारा अल्ट्रासाउंड मशीनों के पंजीकरण जैसे साधारण से कार्य को भी पूर्ण रूप से कार्यान्वित नहीं किया गया है। उच्चतम न्यायालय ने सेंटर फार इन्क्वायरी इन टु हेल्थ एंड थीम्स (CEHAT) एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य, (2001)5 एस.सी.सी. 577 के मामले में कन्या भ्रूण हत्या रोकथाम में निष्क्रिय और असफल रहने वाले अधिकारियों एवं कर्मचारियों को कार्यालय से तत्काल हटा देने की अनुशंसा भी की है।

मुंबई उच्च न्यायालय ने मलपति इनफर्टिलिटि क्लीनिक प्राइवेट लिमिटेड एवं अन्य बनाम एप्रोपिएट अथारिटी पी.एन.डी.टी. एक्ट एवं अन्य, ए.आई.आर. 2005 बाम्बे 26, प्रकरण में कहा कि लिंग परीक्षण कार्य में संलग्न होने के संबंध में यदि किसी व्यक्ति के विरुद्ध प्रथम दृष्टया साक्ष्य उपलब्ध हो तो ऐसे कार्य करनेवाले व्यक्ति के डायग्नोस्टिक सेंटर की अनुज्ञप्ति निलंबित की जा सकती है।

कन्या भ्रूण हत्या रोकने के उपाय

कन्या भ्रूण हत्या रोकने के लिए निम्न उपाय किए जा सकते हैं—

1. महिला गर्भ धारण करने के उपरांत अल्ट्रासाउंड कराने से बचें। पति, सास-ससुर को राजी करें कि जो भी शिशु होगा, उसी की अच्छे-से परवरिश करेंगे।

2. यह चेतना समाज में जागृत की जाए कि स्त्री का जन्म पुरुष के सहस्रों जन्मों से ज्यादा पवित्र, सार्थक और संपन्न होता है, क्योंकि महिलाएं ही पुरुषों को जन्म देती हैं।

3. इस कुरीति के विरुद्ध जनांदोलन चलाया जाए।

4. दहेज मांगने वालों का सामाजिक बहिष्कार किया जाए।

5. स्त्रियों को आर्थिक रूप से सुदृढ़ बनाया जाए।

6. सभी सेवाओं में स्त्रियों के लिए आरक्षण दिया जाए।

7. स्कूली पाठ्यक्रम में कन्या शिशु हत्या को शामिल किया जाए ताकि बच्चों, जो राष्ट्र का भविष्य हैं, उनमें इस कुरीति के प्रति संवेदना उत्पन्न हो।

8. बहुपति विवाह प्रथा का विरोध किया जाए।

9. स्त्रियों के प्रति अपराधों में जीरो टालरेंस नीति अपनाकर अपराधियों को दंड देकर उनके प्रति अपराधों में कमी लायी जाए।

10. स्त्रियों को अधिक-से-अधिक पढ़ाया जाए तथा रोजगार के अवसर उपलब्ध कराए जाएं।

11. दहेज प्रथा, सती प्रथा, बाल विवाह जैसी कुप्रथाएं रोक दी जाएं।

12. गर्भपात कराने वाले डाक्टरों पर प्रभावी अंकुश लगाया जाए। उनके लाइसेंस निरस्त कर दिये जाए।

13. इस भावना का प्रचार-प्रसार किया जाए कि बिना महिला के पुरुष का अस्तित्व ही नहीं है।

सही तो यह है कि अब हमारा समाज काफी विकसित हो चुका है, महिलाओं को इतनी शक्ति कानूनी रूप से मिल चुकी है कि वे अब अबला नहीं हैं। हमें भी उन्हें ताकतवर मानकर उनको अपने साथ कदम-से-कदम मिलाकर चलने देना होगा। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी का कहना था कि, "यदि शक्ति का अभिप्राय पाशविक शक्ति से है तो निश्चित रूप से पुरुष की तुलना में महिलाएं कम ताकतवर हैं। यदि शक्ति का अभिप्राय नैतिक बल से है तो महिला पुरुष से कहीं अधिक शक्तिशाली है। उसकी अंतर्दृष्टि, उसके आत्म बलिदान की भावना और उसकी सहनशीलता पुरुष से कहीं अधिक है। बिना महिला के पुरुष का अस्तित्व नहीं है।"

अब हमें अपनी सोच बदलनी होगी। हम सबको पता है कि समाज की आदर्श स्थिति तो यह है कि पुरुषों और महिलाओं की संख्या का अनुपात बराबर हो। प्रकृति का यह नियम है और वह यह चाहती भी है कि नर और मादा का जोड़ा बने। जोड़ा तभी बनेगा जब दोनों के अंक समान हों। कल्पना कीजिए कि यदि समाज में बेटियों को पैदा ही नहीं होने दिया जाएगा तो कैसा समाज बनेगा। महिलाएं ही तो पुरुषों को जन्म देती हैं। जब वे नहीं रहेंगी तो पुरुषों का अस्तित्व भी तो खतरे में पड़ जाएगा। किसी कवि के शब्दों में—

जब बेटी नहीं जन्माओगे,
तो दुल्हन कहां से लाओगे।

अर्थात पुत्री पैदा नहीं करोगे तो दुल्हन कहां मिलेगी और सामाजिक असंतुलन तो बढ़ेगा ही।

अतः आज जरूरत है मिथकों, भ्रांतियों, शंकाओं और अंधविश्वासों से ऊपर उठकर कन्या भ्रूण को बेरोक-टोक धरती पर आने देने की ताकि नारी बल से धरा का शृंगार हो सके और समाज का पहिया सुचारु रूप से निर्बाध गति से चल सके।

बाक्स नं.-1

स्त्री-पुरुष लिंगानुपात : एक नजर में

राज्य	जनगणना-2011		जनगणना-2001	
	लिंगानुपात	0-6 वर्ष के बच्चों का लिंगानुपात	लिंगानुपात	0-6 वर्ष के बच्चों का लिंगानुपात
संपूर्ण भारत	943	919	933	927
1. केरल	1084	964	1058	965
2. पुडुचेरी	1037	967	1001	913
3. तमिलनाडु	996	943	986	959
4. आंध्र प्रदेश	993	939	978	896
5. मणिपुर	992	936	978	975
6. छत्तीसगढ़	991	969	990	868
7. मेघालय	989	970	975	932
8. उड़ीसा	979	941	972	979
9. मिजोरम	976	970	938	883
10. गोवा	973	942	960	963
11. कर्नाटक	973	948	964	973
12. हिमाचल प्रदेश	972	909	970	957
13. उत्तराखंड	903	890	964	967
14. त्रिपुरा	960	957	950	960
15. असम	958	962	932	845
16. झारखंड	948	948	941	966
17. लक्षद्वीप	946	911	947	960
18. अरुणाचल प्रदेश	938	972	901	798
19. नगालैंड	931	943	909	926
20. मध्य प्रदेश	931	918	920	965
21. महाराष्ट्र	929	894	922	953
22. राजस्थान	928	888	922	946
23. गुजरात	919	890	921	964
24. बिहार	918	995	921	908
25. उत्तर प्रदेश	912	902	898	942
26. पंजाब	895	846	874	961
27. सिक्किम	890	957	875	938
28. जम्मू कश्मीर	889	862	900	964
29. हरियाणा	879	834	861	964
30. अंडमान एवं निकोबार द्वीप समूह	876	968	846	941
31. दिल्ली	868	871	821	942
32. चंडीगढ़	818	880	773	819
33. दादर नगर हवेली	774	926	811	909
34. दमन एवं दीव	618	904	709	916

जैसा व्यवहार आप अपने प्रति चाहते हैं, वैसा ही दूसरों के साथ करें

राकेश 'चक्र'
90 बी, शिवपुरी, मुरादाबाद-244001

विश्व के अच्छी सोच के मनुष्य दूसरों के साथ वैसा ही व्यवहार करते हैं, जैसा वे प्रति चाहते हैं। बल्कि संसार के महापुरुषों के साथ, तो वह होता आया है, जो साधारण-से-साधारण मनुष्य भी अपने साथ कदापि नहीं चाहेगा, लेकिन महापुरुषों ने स्वयं के साथ बुरा होने पर भी सद्व्यवहार करना नहीं छोड़ा। उनकी सद्प्रेरणाओं से ही विश्व समाज आज भी जीवंत और सार्थक बना हुआ है।

आज के परिवेश में यह कैसा विरोधाभास है कि जिस बात या व्यवहार से हमें कष्ट पहुंचता है, वही हम दूसरों के साथ जान-बूझकर परोसते जा रहे हैं। दूसरों के व्यवहार से जिस पीड़ा का अनुभव हमें होता है, वही दूसरों को भी होता है। इस बात का अहसास हम ठंडे दिमाग से क्यों नहीं करना चाहते हैं। जैसा हम अपने लिए चाहते हैं, वैसा ही हम दूसरों के साथ भी करें, तो समाज में फैली अराजकता एवं हिंसा स्वयं ही समाप्त हो जाएगी।

आपस की ईर्ष्या, द्वेष, घृणा, छुआछूत, जाति-पाति, भाई-भतीजावाद, आतंकवाद, क्षेत्रवाद, भाषावाद तथा अपराधों का बढ़ता ग्राफ आदि स्वतः ही कम होकर नष्ट होता जाएगा। लेकिन होता यह है कि यह सब समाप्त होने की बजाए और बढ़ रहा है। अब तक अनेकानेक महापुरुषों ने इन बुराइयों को समाप्त करने के लिए अपना पूरा जीवन समर्पित और बलिदान कर दिया, लेकिन यह समाप्त होने का नाम ही नहीं ले रहा।

अच्छे संस्कार हमें शिष्ट बनाते हैं, यही शिष्टाचार सिखाते हैं और हम मानवता के पोषक बन जाते हैं। अच्छे संस्कारों की कला भारतीय संस्कृति सिखाती है। जिसे विदेशी धारण करने में रुचि प्रदर्शित कर रहे हैं तथा स्वदेशी भोगवाद और सुविधाभोगिता की ओर बढ़कर भारतीय संस्कृति को अंगूठा दिखा रहे हैं। इसे हम विरोधाभास ही तो कहेंगे कि स्वदेशी अपनी संस्कृति से दूर भाग रहे हैं तथा विदेशी इसे अपना रहे हैं।

शिष्टता अपनाइए

हम दूसरों से अपेक्षाएं तो बहुत करते हैं, लेकिन स्वयं वैसा नहीं करते, जो हमें करना चाहिए था। इसी कारण दुःख आकर हमें घेरते रहते हैं और हम उनके चक्रव्यूह में फंसकर अपना आज और कल निष्प्रयोज्य बना रहे हैं।

हम दूसरों के प्रति शिष्ट व्यवहार या शिष्टता का परिचय तभी दे सकते हैं जब हम पूर्णतः स्वयं शिष्ट हो गए हों। यह शिष्टतारूपी पुष्प तभी सुगंधी देता है, जब हम दूरदृष्टि रखते हों, अनुशासनप्रिय हों, दिनचर्या का सही प्रबंध रखते हों तथा साथ ही हमारा जीवन सात्विक हो। सात्विक जीवन ही हमें दूरदृष्टि देकर अनुशासन प्रिय बनाता है तथा हमारी दिनचर्या को नियमित करता है।

अपनी प्रसन्नता के भंडार का खजाना लुटाइए

प्रत्येक मनुष्य में प्रसन्नता का भंडार भरा पड़ा है, लेकिन हमने उसे अपनी तिजोरी में बंद करके ताला लगा लिया है, उसे खर्च ही नहीं करना चाहते, जबकि परमपिता ने इसे अधिक-से-अधिक खर्च करने के लिए भेजा था। अपने भीतर छिपी प्रसन्नता की तिजोरी के ताले को खोलने में देरी मत कीजिए। इसका आनंद स्वयं भी लीजिए तथा दूसरों को देते रहिए। यह आनंद जितना बांटेंगे, यह उतना ही और आता जाता है, अतः इसे

बढ़ाते रहने में लाभ-ही-लाभ है। हमें यह हमारी प्रसन्नता से ही प्राप्त होता है। जो आपके अंदर छिपा पड़ा है, उसे बाहर ढूंढ़ने मत जाइए। हमने अपनी खुशियों को दूसरों पर निर्भर बना दिया है, आप अपनी खुशियों के स्वयं मालिक बनिए, इनकी कमान दूसरों को मत दीजिए। इस खुशी और आनंद को झोंपड़ी में बैठा एक मजदूर भी प्राप्त कर सकता है तथा इसके विपरीत महल में बैठा एक धनाढ्य भी नहीं ले सकता है।

यह आनंद जिसके पास है, वही धनवान है। इस आनंद की खोज करने के लिए अपने मन में खेती करना सीखिए। यदि सच्चे मन से इसे खोजने का प्रयास करेंगे, तो यह अवश्य मिलेगा। यह तो आपकी तिजोरी में बंद पड़ा हुआ है, अपने जीवन को संतुलित बनाकर इसे साधने का प्रयत्न तो करिए, यह दूसरों के साथ वह नहीं करेगा, जिसे आप अपने साथ नहीं चाहते हैं।

हमारे जीवन में वाणी का बहुत महत्व है। इसमें कई तरह के रस भरे हुए हैं, लेकिन हमें कौन-से रस का प्रयोग करना है, यह स्वयं के ऊपर निर्भर है। यह वाणी ही हमारे मित्र और शत्रुओं की संख्या में वृद्धि या कमी कर सकती है। यह वाणी ही हमें आनंद दिला सकती है और यही विष बनकर हमारा विनाश भी कर सकती है।

वाणी का संयम उतना ही आवश्यक है, जितना कि शरीर को स्वस्थ रखने के लिए उचित खान-पान का। जिस तरह उचित खान-पान के बिना हमारा शरीर अस्वस्थ हो जाता है उसी तरह वाणी के संयम के बिना हम अपने मन और आत्मा को उल्लसित और प्रफुल्लित नहीं कर सकते। वाणी के संयम के संबंध में श्री मृदुल कुमार पांडेय (विचारक) ने बहुत सुंदर विचार रखे हैं।

वाणी का संयम

जीवन में वाणी का बहुत महत्व है। वाणी में अमृत भी है और विष भी; मिठास भी है और कड़वापन भी। सुनते ही सामनेवाला आग बबूला हो जाएगा और यदि वाणी में शालीनता है तो सुननेवाला प्रशंसक बन जाए। श्रीमद्भगवद् गीता में तीन प्रकार के तपों की चर्चा है- —शारीरिक तप, मानसिक तप तथा वाचिक तप। वाचिक तप के संबंध में कहा है कि उद्वेग उत्पन्न न करनेवाले वाक्य, हितकारक तथा सत्य पर आधारित वचन एवं स्वाध्याय वाचिक तप हैं। विदेशी विद्वान फ्रैंकलिन ने अपनी सफलता का रहस्य बताते हुए कहा था कि किसी के प्रति अप्रिय न बोलना तथा जो कुछ बोला जाए उसकी अच्छाइयों से संबंधित ही बोला जाए तो इस वाणी से सुननेवाला तो प्रसन्न होगा ही, बोलनेवाला भी आनंदित होगा। वास्तव में वाणी को संयम में रखने वाला व्यक्ति प्रायः ऊंचाइयों तक पहुंच जाता है।

इसके विपरीत अनियंत्रित वाणी वाले व्यक्ति को प्रायः जीवनभर सफलता प्राप्त नहीं हो पाती। जो व्यक्ति वाणी से सदैव मीठा बोलता है उसके मित्रों का क्षेत्र भी विस्तृत होता है। मृदुभाषी होने की स्थिति में लोगों के सहयोग और समर्थन में वह अत्यधिक ऊर्जा का संग्रह कर लेता है, जबकि कटु वचन बोलनेवाला व्यक्ति अकेला पड़ जाता है।

ऋग्वेद में कहा गया है कि जो लोग मन, बुद्धि व ज्ञान की छलनी में छानकर वाणी का प्रयोग करते हैं, वही हित की बातों को समझते हैं और वही शब्द और अर्थ के संबंध ज्ञान को जानते हैं। जो व्यक्ति बुद्धि से शुद्ध वचन का उच्चारण करता है, वह अपने हित को तो समझता ही है, लेकिन जिससे बात कर रहा है उसके हित को भी समझता है। वाणी में आध्यात्मिक और भौतिक, दोनों प्रकार के ऐश्वर्य हैं। मधुरता से कही गई बात कल्याणकारक रहती है, किंतु वही बात कटु शब्दों में कही जाए तो अनर्थ का कारण बन सकती है। महात्मा विदुर ने कहा है कि कटु वचनरूपी वाणी से किसी के मर्म स्थलों को घायल करना पाप है। वे कहते हैं कि कटु वाक्यों का त्याग करने में अपना और औरों का भी भला है।

अपनी सोच सकारात्मक बनाइये

यहां उक्त उदाहरण को देना इसलिए समीचीन था कि समाज में बहुत सारे लोग ऐसे हैं कि उनकी सोच नकारात्मक बनी हुई है, वे अच्छा नहीं सोचते हैं तथा न ही अच्छा सोचने का प्रयास करते हैं। स्वयं में सुधार नहीं करना चाहते हैं। अपने तन-मन एवं घर को साफ-सुथरा रखने में उनका कोई विश्वास नहीं है। वाणी को असंयत रखने में उन्हें सुख मिलता है। लालच और कंजूसी उनका धर्म है। ऐसे लोगों को अपना नजरिया बदलकर अपने जीवन को सकारात्मक सोच का बनाने का प्रयास करना चाहिए। सकारात्मक सोच ही मनुष्य को आनंद प्रदान कर सकती है। वही उसके जीवन को सफल बना सकती है।

अपने जीवन में बदलाव लाएं

हम अपने जीवन में बदलाव क्यों नहीं करना चाहते हैं? हम शिक्षित होते हुए भी क्यों अज्ञानी बने रहते हैं। हम क्यों नहीं समझ पाते हैं कि हमें अपना जीवन किस तरह जीना चाहिए। हम अपने अंदर नकारात्मक सोच को क्यों पाले रहते हैं जो जीवनभर मनुष्य को कुएं का मेढक बनाकर पंगु बना देती है। हम अपनी मुस्कान को क्यों नहीं बिखेरना चाहते हैं, जिसमें कोई धन व्यय नहीं होता है, क्या हमारी मुस्कान के स्रोत सूख गए हैं या उन स्रोतों को बहाना नहीं चाहते हैं। कुएं से जितना अधिक जल निकलता है, वह उतना ही पवित्र होकर अपना दान करता है। हम कुएं क्यों नहीं बनना चाहते हैं, हम मेढक ही बनकर अपनी सोच को मेढक जैसा क्यों बनाते रहते हैं?

आपके पास सोचने-समझने का अभी समय है। उसका लाभ उठाकर मनुष्यता के गुणों को धारण करें। कुछ खास बिंदु जो हमारे जीवन को बदलकर नई ऊर्जा प्रदान कर सकते हैं, उन पर विचार अवश्य करें।

1. यदि आप दूसरों से अपने प्रति अच्छा व्यवहार चाहते हैं, तो आप भी उनसे अच्छा व्यवहार अवश्य करें।

2. सद्व्यवहार करने में धन खर्च नहीं होता है,इसे खूब लुटाइए। इसके फलस्वरूप आपको सुख और आनंद की प्राप्ति होगी।

3. सकारात्मक सोच मन को सुख प्रदान करती है। छोटे से लेकर बड़े-बड़े कार्य भी सकारात्मक सोच के कारण सहजता से निपट जाते हैं।

4. सकारात्मकता ऊंचाइयों की ओर ले जाती है तथा नकारात्मकता आलसी और निकम्मा बनाती है।

5. आशावादी विचार हमारे स्वयं के पाले हुए शत्रुओं जैसे—द्वेष, घृणा, कपट, ईर्ष्या, क्रोध, अहंकार आदि को दूर भगाकर जीवन में आनंद बरसाते हैं तथा इसके विपरीत निराशावादी विचार इन शत्रुओं को मित्र बनाने में सहायक बनते हैं, अतः आशावादिता धारण करें।

6. सकारात्मक सोच हमें कर्म योग, ज्ञान योग और भक्ति योग का पाठ पढ़ाती है, अर्थात जो भी कार्य करें, उसे पूर्ण एकाग्रता से करें, तो हम संसार में रहते हुए सहज में ही तीनों योगों से रू-ब-रू हो सकते हैं।

7. पल-पल में किया गया हमारा सद्व्यवहार, हमें अनेक संकटों से बचा देता है, अतः संकटों से बचना है तो सद्व्यवहार करके अपने जीवन को धन्य बनाइए।

8. जीवन जीने के लिए खाइए, केवल खाने के लिए जीना मत सीखिए। अर्थात् सुखी रहना है तो गम खाइए और कम खाइए तथा अपने जीवन में आनंद-ही-आनंद पाइए।

9. अधिक मोह ही व्यक्ति को कंजूस और लालची बनाता है, अतः मोह से बचिए। साथ ही काम और क्रोध से बचते रहिए। ये तीनों ही नरक के द्वार हैं।

दहेज उत्पीड़न कानून में आरोपियों की तत्काल गिरफ्तारी अनुचित

अरुण कुमार पाठक
c/o चक्रपाणि मनियार 113/4, शिवकुटी (अपट्रान टी.बी. फैक्ट्री के पीछे) इलाहाबाद-211004 (उ.प्र.)

भारत के सर्वोच्च न्यायालय के माननीय न्यायमूर्ति चंद्रमौलि कुमार प्रसाद एवं न्यायमूर्ति पिनाकी चंद्र घोष की खंडपीठ ने क्रिमिनल अपील संख्या 1278/2014, पंजाब राज्य बनाम गुरुमीत सिंह के मामले में अपना फैसला सुनाते हुए पंजाब-हरियाणा उच्च न्यायालय के फैसले पर राज्य सरकार की अपील पर निर्णय देते हुए यह व्यवस्था दी कि भारतीय दंड संहिता की धारा-304 बी अर्थात दहेज हत्या मामले में 'किसी व्यक्ति पर मुकदमा चलाने के लिए उसे उस समय तक रिश्तेदार नहीं माना जा सकता जब तक की पति से उसका खून, विवाह या गोद लिए जाने का रिश्ता न हो।' माननीय न्यायमूर्तिद्वय ने कहा कि भा.दं. संहिता की धारा-304बी (दहेज हत्या) में 'पति के रिश्तेदार' शब्द का आशय उन व्यक्तियों से है जिनका खून, विवाह या गोद लिए जाने के रिश्ते से संबंधित है।

इसके साथ ही माननीय न्यायमूर्तिद्वय ने यह भी स्पष्ट किया कि उनका यह मतलब नहीं है कि ऐसे व्यक्ति पर आत्महत्या के लिए उकसाने जैसे आरोप में मुकदमा नहीं चलाया जा सकता।

माननीय न्यायमूर्तिद्वय ने निर्णय सुनाते समय कहा कि 'पति के रिश्तेदार' शब्द का उल्लेख भा.द. संहिता की धारा-498ए में भी आया है, जिसकी व्याख्या माननीय उच्चतम न्यायालय में निर्णित वाद संख्या यू. सुवेथा बनाम राज्य द्वारा इन्स्पेक्टर आफ पुलिस व अन्य (2009) 6एस सी सी-787 में भी की गयी है जिसमें पति के रिश्तेदार शब्द का अर्थ बताते हुए कहा गया है कि कोई रिश्ता खून, विवाह या गोद लिए जाने से संबंधित है। इस वाद निर्णय के पैरा-10 में कहा गया है कि रिश्तेदार शब्द की परिभाषा न होने के कारण इसका अर्थ मां, पिता, पति, पुत्र, भाई, बहन, भतीजा या भतीजी, पौत्र या किसी बीबी के बच्चे होते हैं। न्यायमूर्तिगण ने कहा कि विजेता गजरा बनाम दिल्ली (2010) 11 एस सी. सी. 618 में भी उक्त यू. सुवेथा के निर्णय की पुष्टि उच्चतम न्यायालय ने की है और रिश्तेदार की परिभाषा में केवल खून एवं विवाह के संबंधों को मान्यता दी है।

न्यायमूर्तिद्वय ने पंजाब सरकार की अपील को खारिज कर दिया। पंजाब सरकार ने इस मामले में एक व्यक्ति को आरोपी के रूप में सम्मन जारी करने का निर्णय निरस्त करने के उच्च न्यायालय के आदेश को चुनौती दी थी। निचली अदालत ने इस मामले में एक व्यक्ति को आरोपी के रूप में यह मानकर कि वह मृत महिला के पति का रिश्तेदार था और घटना में शामिल था, तलब किया था।

अदालत का कहना था कि वह मृतक के पति का रिश्तेदार है और इस अपराध में शामिल है। न्यायमूर्तिद्वय की खंडपीठ ने कहा कि यह व्यक्ति मृतक के पति के रिश्तेदार का भाई है और यह कानून में प्रदत्त पति के रिश्तेदार की परिभाषा के दायरे में नहीं आता है। न्यायमूर्तिद्वय ने कहा कि धारा 304-बी से यह ध्वनि निकलती है कि जब किसी महिला के विवाह के सात साल के भीतर सामान्य परिस्थितियों से इतर जलने या किसी दूसरी प्रकार की चोटों की वजह से मृत्यु होती है तो यह माना जाएगा कि उसके पति या पति के किसी रिश्तेदार ने दहेज की खातिर हत्या का अपराध किया है, यदि यह पता चलता है कि मृत्यु से ठीक पहले महिला के प्रति उसके पति या पति के किसी रिश्तेदार ने क्रूरता की है या उसे प्रताड़ित किया है।

इसी खंडपीठ ने उसी दिन अर्नेश कुमार बनाम

बिहार राज्य एवं अन्य से संबंधित क्रिमिनल अपील संख्या 1277/2014 में निर्णय देते हुए कहा कि दहेज विरोधी कानून (धारा-498ए भा.दं.वि.) के तहत दर्ज मामलों में पुलिस आरोपी को अपने आप गिरफ्तार नहीं कर सकती है। प्रत्येक ऐसे मामलों में पुलिस को गिरफ्तारी की वजह बतानी होगी, जिसकी न्यायिक समीक्षा की जाएगी। न्यायमूर्तिद्वय की खंडपीठ ने इस संबंध में सभी राज्य सरकारों को निर्देश दिया है कि वे अपने पुलिस अधिकारियों को हिदायत दें कि भा.दं. संहिता की धारा-498ए के तहत मामला दर्ज होने पर वे अपने मन से गिरफ्तारी न करें, बल्कि पहले दं.प्र. संहिता की धारा-41 में प्रदत्त मापदंडों के तहत गिरफ्तारी की आवश्यकता के बारे में खुद को संतुष्ट करें। खंडपीठ ने राज्य सरकारों को यह भी निर्देश दिया है कि वे यह सुनिश्चित करें कि दहेज प्रताड़ना सहित 07 साल की सजा के दंडनीय अपराधों में पुलिस गिरफ्तारी का सहारा न ले।

खंडपीठ ने इस बात पर घोर आपत्ति प्रकट की कि पुलिस द्वारा पहले गिरफ्तारी और फिर बाकी कार्रवाई करने का रवैया उचित नहीं है। इस प्रवृत्ति पर तत्काल अंकुश लगना चाहिए। उच्चतम न्यायालय का दहेज उत्पीड़न के मामलों में तत्काल गिरफ्तारी पर रोक लगाने का वर्तमान निर्णय उसके पूर्व में किये गये एक फैसले का ठीक उल्टा है। वर्ष 1987 में समुंदर सिंह बनाम राजस्थान राज्य के मामले में माननीय उच्च न्यायालय के दो जजों की पीठ ने ही राजस्थान उच्च न्यायालय द्वारा दहेज उत्पीड़न के मामले में नवविवाहित पीड़िता के ससुर को अंतरिम जमानत दिए जाने के फैसले को पलट दिया था। शीर्ष अदालत ने इस मामले में टिप्पणी भी की थी कि आरोपी को जमानत दिया जाना यह साबित करता है कि देश में दहेज उत्पीड़न के मामलों को किस तरह हर स्तर पर हल्के में लिया जा रहा है।

न्यायमूर्तिद्वय की खंडपीठ ने कहा कि पुलिस अधिकारियों को दहेज उत्पीड़न के मामलों में आरोपी की गिरफ्तारी करने की जरूरत के बारे में मजिस्ट्रेट के सामने कारण और सामग्री पेश करनी पड़ेगी। न्यायालय के संतुष्ट होने पर ही गिरफ्तारी की जा सकेगी। खंडपीठ ने कहा कि जिन किन्हीं मामलों में सात साल तक की सजा हो सकती है या उनमें गिरफ्तारी सिर्फ इस कयास के आधार पर नहीं की जा सकती कि आरोपी ने वह अपराध किया होगा। गिरफ्तारी तभी की जाए जब इस बात के पर्याप्त सबूत हों कि आरोपी के आजाद रहने से मामले की जांच प्रभावित हो सकती है तथा वह कोई और अपराध कर सकता है या फरार हो सकता है। खंडपीठ ने कहा कि दहेज प्रताड़ना से जुड़ा मामला गैर जमानती है इसलिए लोग इसे हथियार बना लेते हैं।

खंडपीठ ने कहा कि पति और उसके रिश्तेदारों द्वारा स्त्री को प्रताड़ित करने की समस्या पर अंकुश पाने के इरादे से भा.दं. संहिता की धारा-498ए शामिल की गयी थी। धारा 498-ए को संज्ञेय और गैर जमानती अपराध होने के कारण प्रावधानों में संदिग्ध स्थान प्राप्त है जिसे असंतुष्ट पत्नियां कवच के बजाए हथियार के रूप में इस्तेमाल करती हैं। खंडपीठ ने कहा कि परेशान करने का सबसे आसान तरीका पति और उसके रिश्तेदारों को इस प्रावधान के तहत गिरफ्तार कराना है।

अनेक मामलों में पति के अशक्त दादा-दादी, विदेश में वर्षो से रहनेवाली उनकी बहनों को भी गिरफ्तार किया गया। गिरफ्तारी व्यक्ति की स्वतंत्रता को बाधित करती है, उसे अपमानित करती है और उसकी साख पर हमेशा के लिए धब्बा लगाती है। कोई भी गिरफ्तारी सिर्फ इसलिए नहीं की जानी चाहिए कि अपराध गैर जमानती और संज्ञेय है।

खंडपीठ ने कहा कि गिरफ्तार करने का अधिकार एक बात है और इस्तेमाल को न्यायोचित ठहराना दूसरी बात है। गिरफ्तार करने के अधिकार के साथ ही पुलिस अधिकारी ऐसा करने के कारणों के साथ न्यायोचित ठहराने योग्य होना चाहिए। किसी व्यक्ति के खिलाफ अपराध करने का आरोप लगाने के आधार पर फौरी

तौर पर कोई गिरफ्तारी नहीं की जानी चाहिए। दूरदर्शी और बुद्धिमान पुलिस अधिकारी के लिए उचित होगा कि आरोपों की सच्चाई थोड़ी बहुत जांच के बाद उचित तरीके से संतुष्ट हुए बगैर गिरफ्तारी नहीं की जाए।

खंडपीठ ने कहा है कि हाल के दिनों में वैवाहिक विवाद में इजाफा हुआ है। शादी जैसी संस्था प्रभावित हो रही है। दहेज प्रताड़ना कानून इसलिए बनाया गया कि महिलाओं को प्रताड़ना से बचाया जा सके, लेकिन इस कानून का अधिकांश महिलाएं दुरुपयोग करती हैं। वे या तो झूठे मुकदमे दर्ज कराती हैं, या बात को बहुत अधिक बढ़ा-चढ़ाकर प्रस्तुत करती हैं। अधिकांश महिलाएं न केवल अपने पति बल्कि तमाम ससुराल वालों के खिलाफ मनगढ़ंत आरोप पुलिस थाने में लगाती हैं।

अपराध के आंकड़ों का जिक्र करते हुए खंडपीठ ने कहा कि वर्ष 2012 में धारा-498ए के तहत अपराध के लिए 1,97,762 व्यक्ति गिरफ्तार किए गए और इस प्रावधान के तहत गिरफ्तार किए गए व्यक्तियों में से करीब एक-चौथाई पतियों की मां और बहन जैसी महिलाएं थीं, जिन्हें गिरफ्तार किया गया। खंडपीठ ने कहा कि भा.दं. संहिता के तहत वर्ष 2012 में हुए अपराधों में कुल गिरफ्तार व्यक्तियों का यह 6 प्रतिशत है। यह भारतीय दंड संहिता की विभिन्न धाराओं के तहत हुए कुल अपराधों का 4.5 प्रतिशत है, जो चोरी और चोट पहुंचाने जैसे अपराधों से इतर किसी अन्य अपराध से अधिक है। ऐसे अपराधों में आरोप-पत्र दाखिल करने की दर 93.6 प्रतिशत तक है, जबकि सजा दिलवाने की दर 15 प्रतिशत है।

वर्ष 2013 में गृह मंत्रालय को दी गयी अपनी रिपोर्ट में जस्टिस मलिमथ कमेटी ने यह सुझाव दिया था कि दहेज प्रताड़ना के मामलों में जमानत का प्रावधान होना चाहिए। उच्चतम न्यायालय भी कई बार केंद्र सरकार से दहेज विरोधी कानून भा.दं. संहिता की धारा-498ए पर पुनः विचार करने के लिए कह चुका है। पूर्व में उच्चतम न्यायालय के न्यायमूर्ति दलवीर भंडारी और न्यायमूर्ति के.एस. राधाकृष्णन की खंडपीठ ने कहा था कि पतियों और उनके रिश्तेदारों के खिलाफ क्रूर व्यवहार से संबंधित बात का इतना अधिक बतंगड़ बनाया जाता है कि अधिकांश शिकायतों में से सच को निकाल पाना हथेली पर सरसों जमाने जैसा कठिन काम है। उच्चतम न्यायालय ने इस बात को लेकर चिंता जतायी है कि भा.दं.वि. की धारा-498ए के तहत मुकदमों की संख्या निरंतर बढ़ती जा रही है। इसके दृष्टिगत खंडपीठ ने कहा था कि हमारे सामने इस किस्म की शिकायतें बड़ी संख्या में आती हैं, जिनमें से अधिकांश निराधार होती हैं और जिन्हें गलत इरादों से दर्ज कराया गया होता है।

दहेज हत्या और दहेज उत्पीड़न (प्रताड़ना) को लेकर मा. उच्चतम न्यायालय की खंडपीठ के ये निर्णय दूरगामी असर डालने वाले हैं। हालांकि कुछ महिला संगठन व अधिवक्ताओं का एक वर्ग भी इन निर्णयों का विरोध कर रहा है। उच्चतम न्यायालय के वरिष्ठ अधिवक्ता के.टी. तुलसी ने दहेज हत्या के मामले में इस नवीनतम निर्णय पर असंतोष जताते हुए कहा कि कोई भी लड़की सिर्फ ससुराल वालों को तंग करने के लिए आत्महत्या नहीं कर सकती है। लंबे समय तक उत्पीड़न और परिस्थितियों से गुजरने के बाद ही कोई युवती ऐसा कदम उठाती है। ऐसे में यह कहना कि कानून के दुरुपयोग के मामले बढ़े हैं, कतई तर्कसंगत नहीं है।

दहेज उत्पीड़न के 85 प्रतिशत मामलों के अदालत में खारिज होने का तर्क देते हुए कानून के दुरुपयोग की बात की जा रही है लेकिन महज इस आधार पर यह बात कहना कतई सही नहीं है। हर कानून का दुरुपयोग होता है। हत्या के अपराध की धारा-302 भा.दं.वि. की बात करें तो इसमें महज 6 प्रतिशत लोगों को ही सजा हो पाती है, तो क्या इसका भी दुरुपयोग हो रहा है? यही स्थिति भ्रष्टाचार और मिलावट जैसे मामलों की भी है। मामले साबित होने की दर से कानून की उपयोगिता या उसके दुरुपयोग का अंदाजा नहीं लगाया जा सकता है।

सर्वोच्च न्यायालय के दहेज प्रताड़ना के संबंध में दिए गए निर्णय से पुलिस को गिरफ्तारी के तौर-तरीकों का सही ढंग से पालन करना होगा। धारा-41 दंड प्रक्रिया संहिता के तहत पुलिस को दहेज उत्पीड़न और सात साल तक की सजा वाले अन्य मामलों में 'गिरफ्तारी कब की जा सकती है?' के न्यायालय के निर्देशों का पालन करना होगा।

पत्नी द्वारा प्रताड़ना का आरोप लगाने, आत्महत्या करने या दहेज के लिए हत्या के ज्ञात कारण :

1. सामाजिक-पारिवारिक व व्यक्तिगत मुद्दों पर मतभेद एवं एक-दूसरे की भावनाओं को न समझना।

2. पति द्वारा पत्नी की उपेक्षा तथा उत्पीड़न, जैसे शराब पीकर उसके साथ मारपीट करना, सिगरेट से जलाना आदि।

3. पति/ पत्नी के गैर कानूनी (विवाहेत्तर) संबंध होना या ऐसे संबंधों का दोनों में से किसी के द्वारा शक करना।

4. पति द्वारा अवैध तरीके से दूसरी शादी करना।

5. शारीरिक संबंधों में असमर्थता या अप्राकृतिक तरीके से शारीरिक संबंध बनाना।

6. पति के परिवार द्वारा पत्नी के मामलों में अत्यधिक दखल देना, कम दहेज के लिए ताना देना, लड़की पैदा होने पर उसके साथ मारपीट करना, स्त्री द्वारा गर्भ धारण न करने पर ताना देना स्त्री से ज्यादा काम कराना आदि।

7. पति/पत्नी के पारस्परिक अहंकार, दूसरों से अनावश्यक उसकी या अपनी तुलना करना।

8. पत्नी द्वारा बार-बार एकल परिवार की इच्छा व्यक्त करना।

9. पत्नी द्वारा पति को अपने मायके में चलकर रहने के लिए कहना आदि।

कब की जा सकती है गिरफ्तारी?

1. अगर पुलिस को लगे कि आरोपी दुबारा अपराध कर सकता है।

2. अगर आरोपी के गवाहों को धमकाने या फिर साक्ष्यों को प्रभावित करने की संभावना हो।

3. आरोपी से छानबीन करने के लिए गिरफ्तारी जरूरी लगने पर।

4. अभियुक्त को फरार होने से रोकना हो।

5. अभियुक्त की कोर्ट में पेशी को सुनिश्चित करना हो।

6. वाद के तथ्यों को जानने वाले किसी व्यक्ति को प्रलोभन देने, धमकाने या किसी प्रकार के आश्वासन देने पर।

7. न्यायालय के आवश्यकतानुसार उसके समक्ष अभियुक्त की उपस्थिति सुनिश्चित करने हेतु।

उपरोक्त सात बिंदुओं के आधार पर ही अभियुक्त की गिरफ्तारी की जा सकती है। पुलिस के विवेचकों को चाहिए कि अपराध का पंजीकरण होने पर पहले उसमें नामजद आरोपियों के विरुद्ध पर्याप्त साक्ष्य संकलित करे तथा यदि उन आरोपियों द्वारा उपरोक्त 07 बिंदुओं में से किसी का उल्लंघन किया जा रहा हो या किए जाने की संभावना हो, तभी उनकी गिरफ्तारी करे। गिरफ्तारी करने से पूर्व गिरफ्तारी के कारणों को केस डायरी में लेखबद्ध किया जाना आवश्यक है। यदि ऐसा नहीं है तो सात साल तक की सजा वाले अपराधों में अभियुक्तों को व्यक्तिगत मुचलके तथा जमानत पर छोड़ दिया जाए।

दहेज प्रताड़ना तथा दहेज हत्या के मामलों में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा जारी की गयी गाइड लाइनों का अक्षरशः पालन किया जाए तथा तदनुसार ही पंजीकृत अभियोगों में कार्रवाई की जाए। न्यायालय के निर्देशों का उल्लंघन करने पर विवेचक पुलिस अधिकारी को न्यायालय का कोपभाजन बनना पड़ सकता है। गिरफ्तारी के संबंध में माननीय न्यायालय द्वारा धारा-41 दं.प्र.सं. में किए गए संशोधनों का अनुपालन करते हुए ही गिरफ्तारी की जाए ताकि व्यक्ति की गरिमा सुरक्षित रहे तथा न्याय की मंशा भी प्रभावित न हो।

अपराध, शोषण और नशे में डूबा यह कैसा बचपन?

प्रकाश तिवारी
एम.एससी. (न्यायिक विज्ञान)
यूजीसी नेट, अलका आवास, गली नं. 8 राजेंद्र नगर,
सतना (म.प्र.) 485001

बचपन! हम सबकी जिंदगी की वह अवस्था, जिसे हम सब हमेशा वापस पाना चाहते हैं। मां के दुलार और पिता की डांट-फटकार और अनुशासन में छिपे प्यार के बीच बच्चा सामाजिकता, नैतिकता और भविष्य में काम आने वाली सीख लेता है।

लेकिन इसके विपरीत यथार्थ जीवन में आए दिन हम सड़कों, रेलवे स्टेशनों और होटलों में ऐसे बच्चों को देखते हैं, जो कि ममता के आंचल और पिता की छाया से दूर शोषण, अपराध और नशे की गिरफ्त में जकड़े होते हैं। इन बच्चों को हम आम भाषा में "आवारा बच्चे" कहते हैं। हममें से कुछ लोग इन्हें घृणा की दृष्टि से देखते हैं, कुछ सहानुभूति दिखाते हैं और कुछ लोग पैसे या अन्य किसी वस्तु को देकर इनकी मदद करते हैं। पर क्या कभी किसी ने सोचा कि ये आवारा बच्चे कौन हैं? ये आवारा कैसे बने? क्यों इनका बचपन नशे, शोषण या अपराध के अंधेरे में गुम हो गया? क्या कभी सरकार या कानून व्यवस्था ने इनके सुधार के लिए कुछ किया?

शायद नहीं! ऐसे बच्चे या तो अनाथ होते हैं या फिर अपनी मर्जी से घर से भागे होते हैं या फिर किसी के प्रलोभन या बहलावे में आकर मानव तस्करी का शिकार हो जाते हैं।

इन्हें 'आवारा' बनाने में कई बार तो इनके परिवार का ही हाथ होता है। पारिवारिक कलह, संघर्ष, गरीबी, आर्थिक लालच कुछ ऐसे कारण हैं जो इन बच्चों को शिक्षण, संस्कार और पालन-पोषण से महरूम कर देते हैं। सड़कों, ट्रेनों या गलियों में छोटा-मोटा सामान बेचकर, होटल या किसी के घर में काम करके या भीख मांगकर ये जीविकोपार्जन करते हैं। इनके चेहरे से शायद इनके काम को लेकर इनकी खुशी दिखती हो, पर उसके पीछे छिपे दर्द को हम सभी जानते हैं।

सड़कों पर रहनेवाले बच्चों के लिए जहां दिन का उजाला धूल, धूप और शोषण से भरा होता है, वहीं रात का अंधेरा इनके लिए अपराध की कालिख लेकर आता है। इन्हें देखकर, इनके बारे में पढ़कर या सुनकर हम सबको बहुत बुरा लगता है, कि जिन बच्चों को हम कल का भविष्य बताते हैं वे आज ही नशे, अपराध और शोषण के अंधकार से घिरे हैं। बच्चों की इस स्थिति के लिए जितनी जिम्मेदार परिवार की लापरवाही है उतनी ही सरकार की लचर कानून व्यवस्था भी।

महत्वपूर्ण सवाल यह है कि क्या सरकार सिर्फ महिलाओं के उत्थान हेतु कानून बनाने के लिए प्रतिबद्ध है? समलैंगिक कानून, लिव-इन कानून आदि लागू करने को लेकर सरकार के साथ-साथ सभी देशवासियों में एक अजीब-सा उत्साह है पर क्या इस देश के भविष्य को संवारने के लिए सरकार, कानून और हम सबकी कोई जिम्मेदारी नहीं?

सरकारी नीतियां एवं प्रयास

कानून की किताबों में ऐसे बच्चों के अधिकारों को सुरक्षित करने और इन्हें अंधेरे से निकालकर इनके भविष्य को संवारने के लिए कई कानून हैं परंतु भारत में शायद कानून तोड़ने के लिए ही बनाए जाते हैं और शायद उनका पालन न करना या उन्हें तोड़ना कोई गलत बात नहीं है।

26 दिसंबर, 2006 में हुए 'निठारी कांड' के संबंध में सुप्रीम कोर्ट ने देश की कानून व्यवस्था और सरकार को ऐसे सभी कानूनों और प्रस्तावों को सख्ती से लागू

करने के निर्देश दिए जो आवारा या बेसहारा बच्चों की मदद के लिए बनाए गए हैं।

ऐसे कुछ कानून इस प्रकार है :

1. एकीकृत बाल संरक्षण स्कीम (आईसीपीएस)

इस स्कीम का उद्देश्य बच्चों की सुरक्षा करना है। इसमें आपातकालीन आउटरीच (अपने कार्यक्षेत्र से बाहर जाकर) सेवाएं, आश्रय, पालन-पोषण, विशेष आवास, खोए और बिछड़े बच्चों की जानकारी के लिए वेबसाइट जैसे प्रयासों से बच्चों को सहायता पहुंचाई जाती है। इस योजना का उद्देश्य बेसहारा, आवारा, भिखारियों और यौन कर्मियों के बच्चों, गंदी बस्तियों और कठिन परिस्थितियों में रहनेवाले बच्चों, एचआईवी एड्स पीड़ित बच्चों, बाल भिखारियों, यौन शोषित तथा किसी भी प्रकार के शोषण के शिकार बच्चों को लाभ पहुंचाने तथा उन कार्यों और स्थितियों से जुड़े जोखिमों को कम करना है जो बच्चों के साथ गलत व्यवहार, तिरस्कार, शोषण, उपेक्षा और अलगाव को बढ़ावा देते हैं। इसके अंतर्गत बाल न्याय कार्यक्रम, आवारा बच्चों हेतु एकीकृत कार्यक्रम, स्वदेशी दत्तक ग्रहण प्रोत्साहन हेतु शिशु गृहों की सहायता जैसे कार्यक्रम भी शामिल हैं।

2. समन्वित बाल विकास सेवा योजना : महिला एवं बाल विकास मंत्रालय द्वारा इस योजना को 1975 से चलाया जा रहा है। इसका उद्देश्य स्कूल जाने से पहले बच्चों के लिए एकीकृत रूप से सेवाएं उपलब्ध कराना है, ताकि ग्रामीण, आदिवासी और झुग्गी वाले क्षेत्रों में बच्चों की उचित वृद्धि और विकास सुनिश्चित किया जा सके। केंद्र सरकार द्वारा प्रायोजित यह योजना बच्चों के पोषण की निगरानी करती है।

3. एकीकृत स्ट्रीटचाइल्ड प्रोग्राम : इसके अंतर्गत सड़कों पर रहनेवाले निराश्रित बच्चों को छत मुहैया कराई जाती है तथा उन्हें तकनीकी एवं रोजगारोन्मुखी शिक्षा एवं प्रशिक्षण दिया जाता है।

4. उदिशा : यह विश्व बैंक से सहायता प्राप्त महिला एवं बाल विकास परियोजना है। इस कार्यक्रम का उद्देश्य देशभर में बाल-देखभाल करनेवाले कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित करना है।

इस क्षेत्र में सरकार की अपेक्षा गैर सरकारी संगठनों ने सबसे ज्यादा काम किया है, क्योंकि इनकी पहुंच हर तबके तक है। इनके कामों को जनता ने भी बहुत सराहा है। इनके अथक प्रयासों की वजह से ही हालात थोड़े सुधरे हैं।

इनमें से प्रमुख संगठन इस प्रकार हैं :—

1. आशा किरण : यह संस्थान 1993 से भारत में आवारा और बेसहारा बच्चों की मदद में लगा है। दिल्ली जैसे सभी बड़े शहरों में इस संस्थान की शाखाएं हैं। यह संस्थान बेसहारा, अनाथ और आवारा बच्चों की पढ़ाई के लिए कार्य करता है।

2. चाइल्ड लाइन इंडिया हेल्पलाइन : भारत में यह संस्था सबसे पहले 1996 में मुंबई में आरंभ की गई थी और अब यह लगभग भारत के सभी राज्यों एवं जिलों में कार्यरत है। इस प्रोजेक्ट की संस्थापक 'जेरू बिलीमोरिआ' थीं। यह देश की सबसे कारगर संस्था और हेल्पलाइन है जिसने बाल-विकास कार्यों के लिए कई पुरस्कार भी जीते हैं।

3. स्माइल : इसकी स्थापना वर्ष 2002 में हुई थी। यह संस्था भारत के सबसे ज्यादा हाई-प्रोफाइल गैर सरकारी संगठनों में से एक है। इस संस्था ने मुंबई में अनाथालयों के लिए सबसे ज्यादा पैसा इकट्ठा किया है।

4. स्ट्रीटचाइल्ड एसोशिएशन : इसे 'वन-वे मिशन' के नाम से भी जाना जाता है। इसकी स्थापना वर्ष 2000 में हुई। यह संस्था निराश्रित बच्चों की देखभाल तथा उनकी शिक्षा के लिए कार्य करती है।

5. आई इंडिया : इस संस्थान की नींव 1993 में 'प्रभाकर गोस्वामी और ऊषा गोस्वामी' ने रखी, जो कि स्वयं अनाथ और बेसहारा थे।

यह संगठन जयपुर मे सबसे ज्यादा सक्रिय है और इसका कार्यक्षेत्र छोटे बच्चों के पालन, शिक्षा, आवास एवं देखरेख की तरफ ज्यादा है।

सिर्फ ये सब ही नहीं भारत में और कई ऐसे गैर सरकारी संगठन हैं जो बिना किसी मदद की परवाह किए बच्चों के राहत एवं पुनर्वास, सुधार, शिक्षा एवं पोषण कार्यों के लिए कार्यरत हैं।

जिम्मेदार है पुलिस भी

"शक्ति का पास होना महत्वपूर्ण नहीं है, महत्वपूर्ण है शक्ति का सदुपयोग।"

यह कथन शायद पुलिस और कानून व्यवस्था के संबंध में ही कहा गया है। समाज में कानून व्यवस्था की रीढ़ 'पुलिस' चाहे तो इन मासूमों का बचपन नर्क बनने से रोक सकती है और इन्हें शोषण, नशे और अंधकार के इस जीवन से निकलकर नए अवसर और बेहतर जीवन दे सकती है, लेकिन यथार्थ में ऐसा नहीं होता, न ही पुलिस कभी इस संबंध में किसी पहल के लिए सोचती है।

सड़कों और ट्रेनों पर घूमते ये 'आवारा बच्चे' क्या पुलिस को दिखाई नहीं देते?

सड़क किनारे ढाबों, होटलों, बारों में हो रहे बच्चों के शोषण से क्या पुलिस अंजान है?

शहरों में आए दिन बनने वाली बड़ी-बड़ी इमारतों में काम करने वाले मासूम बाल-श्रमिक, क्या पुलिस की नजरों में कभी नहीं आए?

यह सब हमारी तरह पुलिस को भी दिखता है। कई बार तो पुलिस कार्यालय या आवासों के निर्माण के दौरान बाल मजदूरों का उपयोग किया जाता है, पर पुलिस सब देखकर भी अनदेखा कर देती है।

अक्सर छोटे बच्चे ही पुलिस स्टेशनों में चाय देते हुए दिख जाते हैं, सड़क के किनारे हर सिग्नल पर भीख मांगते हैं या फिर छोटा-मोटा सामान बेचते हैं, रात के अंधेरे में नशे और जुए में डूबे कुछ बच्चों को तो पुलिस रात्रि गश्त के दौरान पकड़ती भी है, लेकिन बजाय इनके सुधार और पुनर्वास के पुलिस भी इनके साथ घृणित व्यवहार करती है और इनके मन में कानून और व्यवस्था के खिलाफ धीरे-धीरे असंतोष जागने लगता है।

पुलिस की जागरूकता, त्वरित कार्रवाई और जनता के साथ समन्वय इस समस्या का सहज समाधान है। पुलिस के पास अधिकार, दूरदर्शिता, शक्ति सब है बस जरूरत है अंधेरे में गुम होते मासूम बचपन को सही राह पर लाने की इच्छाशक्ति और लगन की, इनके प्रति घृणा की जगह सहृदयता की और हम सब समाज के रक्षकों से ऐसी सकारात्मक पहल की आशा करते हैं।

जरूरत है सिर्फ एक पहल की : अक्सर ऐसे बच्चों की फोटो खींचकर सोशल नेटवर्किंग साइट्स पर डाली जाती है और उस पर कमेंट लिखा जाता है "ये है मेरा इंडिया"। क्या हमारा कर्तव्य सिर्फ अपने देश के बिगड़े हालात का मजाक उड़ाना है? क्या अपने समाज और देश के प्रति हमारी कोई जिम्मेदारी नहीं बनती?

जिस प्रकार क्रिकेट टीम में सिर्फ एक खिलाड़ी के अच्छा खेलने से टीम अच्छी नहीं हो जाती उसी प्रकार सरकार एवं एनजीओ के साथ-साथ हमें भी बदलाव के लिए प्रयास करने होंगे।

न जाने कितने मासूम इस दलदल में डूब चुके हैं और न जाने कितने डूबने वाले हैं। अगर अब भी हम सबने पहल नहीं की, तो ये बच्चे ही हमारे समाज के लिए खतरा बन जाएंगे। गरीबी और भूख शायद इन्हें 'चोर' बना दे, नशे की लत शायद 'खूनी' या शोषण का दानव शायद इनकी जान ही ले ले।

गैर सरकारी संगठनों के काम से एक बात तो स्पष्ट है कि स्ट्रीट चाइल्ड की मदद के लिए निम्नतम स्तर पर प्रयास करने होंगे, तभी शायद कुछ सकारात्मक परिणाम मिलेंगे, वरना सरकार तो हमेशा की तरह सिर्फ बाहर से ही देखती रह जाएगी और इनका बचपन एक अभिशाप बन चुका होगा।

कानून और सरकार के साथ-साथ हर नागरिक की भी यह जिम्मेदारी है कि, वह देश के भविष्य को सही राह पर लाने के लिए प्रयास करे।

इसलिए जब भी आप अपने आस-पास किसी

होटल में काम करनेवाले, कूड़ा-करकट बीननेवाले, ट्रेन, बस या सड़कों पर भीख मांगने या सामान बेचने वाले बच्चों को देखें तो उनसे घृणा करने या पैसे से उनकी मदद करने के बजाय उनसे बात करें, जानने की कोशिश करें कि आखिर किस वजह से उनके हाथ कलम से महरूम हैं। अपने कीमती समय में से थोड़ा-सा समय निकालकर इन्हें साक्षर करने का प्रयास करें। किताब, कॉपी जैसी सामग्री देकर उन्हें शिक्षा के लिए प्रेरित करें। बदलाव लाने की जिम्मेदारी सिर्फ सरकार या गैर सरकारी संगठनों की नहीं है। हर बड़ी इमारत की शुरुआत नींव के एक पत्थर से होती है, इसलिए बदलाव की इस इमारत की नींव का पत्थर आप भी हो सकते हैं।

ऐसे बच्चे अक्सर मानव तस्करी जैसे अपराध का शिकार भी हो सकते हैं, इसलिए ऐसे बच्चों की जानकारी तुरंत बच्चों की हेल्पलाइन 1098 पर फोन करके दें।

आपकी सिर्फ एक छोटी-सी पहल किसी मासूम का जीवन संवार सकती है। लापरवाही छोड़िए और आस-पास एवं समाज में जाग्रति फैलाइए, जिम्मेदार नागरिक बनिए और सबको उनकी जिम्मेदारी समझाइए। अगर अभी भी हम सब नहीं चेते, तो छोटी-छोटी लापरवाहियां मिलकर एक बड़ी समस्या बन जाएगी, और इसके जिम्मेदार कानून व्यवस्था के साथ-साथ हम सब भी होंगे।

उत्पीड़ित व्यक्ति एवं उत्पीड़नशास्त्र

डा. मीरा सिंह
समाजशास्त्र विभाग
आगरा कालेज, आगरा

आपराधिक कानून, कानून प्रवर्तन, न्यायालय की कार्यप्रणालियां तथा न्याय का प्रशासन प्रायः मात्र आपराधिक कृत्य के कर्ता पर ही सकेंद्रित होता है। जब किसी अपराध के संदर्भ में पुलिस को सूचना दी जाती है वह अपराधकर्ता की तलाश करना प्रारंभ कर देती है। वह अपराधकर्ता अथवा संदिग्ध व्यक्ति को गिरफ्तार करती है। पुलिस अपराधकर्ता की खोज के संदर्भ में उत्पीड़ित व्यक्तियों को खोज करती है। अपराधकर्ता को खोजकर उसके आपराधिक कृत्य के संदर्भ में अपना मत देते हुए न्यायालय को उसके अपराध को सिद्ध करने के लिए तथा आवश्यक दांडिक कार्रवाई हेतु सूचना प्रदान करती है।

उत्पीड़ित व्यक्ति अपराधी व्यक्ति के आपराधिक कृत्यों के संदर्भ में राज्य के लिए साक्षी के रूप में प्रस्तुत होता है। अपराधी-व्यक्ति न्यायालय द्वारा सिद्ध दोष होने पर अपराधी घोषित किया जा सकता है और दांडिक संस्थाओं जैसे कारागार में भेजा जा सकता है। न्यायालय द्वारा उसे उसकी अपराध की गंभीरता के अनुसार ही दंडित किया जाता है। न्यायालय द्वारा उसे अर्थदंड भी दिया जा सकता है अथवा परिवीक्षा पर छोड़ा भी जा सकता है। आपराधिक व्यक्तियों के बारे में न्यायालय द्वारा सांख्यिकी रखी जाती है। गिरफ्तारी की सांख्यिकी पुलिस द्वारा रखी जाती है। निःसंदेह, अधिकांश आपराधिक कृत्यों के बारे में लोगों को कोई जानकारी नहीं हो पाती है, क्योंकि संपन्न राजनीतिक एवं उच्चस्थ व्यक्तियों द्वारा किए गए आपराधिक कृत्यों के बारे में पुलिस को कोई जानकारी ही नहीं होती। राजनीति के गंदे खेल में सम्मिलित अखाड़ियों, गुंडों, बदमाशों, लुटेरों और डाकुओं के बल पर जघन्य अपराध करते कराते हैं और लोकतंत्र के नाम पर कलंक लगाते हैं, किंतु उनके आपराधिक कृत्यों के प्रति समाज की आंखें बंद रहती हैं। एक जर्मन अपराधशास्त्री हेनरी एलेनबर्गर ने कहा था कि "अपराधी एवं उत्पीड़ित व्यक्ति के बीच के संबंधों की समस्या पर अभी बहुत कुछ कहना है और अभी बहुत कुछ अन्वेषित करना है। यह नवीन क्षेत्र है, जिसका एक विशाल क्षेत्र सैद्धांतिक एवं व्यावहारिक महत्व का है।" "अपराधी-उत्पीड़ित व्यक्ति" के विचार को इसके उचित स्थान में रखने की आवश्यकता है।

अन्य देशों की भांति भारत में भी आपराधिक कृत्यों की संख्या सुरसा के मुंह समान बढ़ती जा रही है। इसलिए समाज में उत्पीड़ित व्यक्तियों की संख्या भी उसी अनुपात में बढ़ती जा रही है। समाज में अपराधियों के प्रति लोगों की सामान्यतः नकारात्मक दृष्टि होती है, जबकि उत्पीड़ित व्यक्तियों के प्रति सकारात्मक दृष्टि होती है। अपराधिक व्यक्तियों को घृणा व हेय की दृष्टि से देखा जाता है जबकि उत्पीड़ित व्यक्तियों को स्नेह व सहानुभूति की दृष्टि से देखा जाता है परंतु उत्पीड़ित व्यक्ति भी कभी-कभी बहुत ही खतरनाक एवं अपराधी प्रवृत्ति के व्यक्ति होते हैं और आपराधिक कृत्य के घटने में महनीय भूमिका अदा करते हैं। अपने आपराधिक कृत्यों को छिपाने का प्रयास करते हैं। जिस प्रकार एक अपराधी सदैव दोषी या अपचारी ही नहीं होता, उसी प्रकार एक उत्पीड़ित व्यक्ति भी सदैव निर्दोष या अनाचारी नहीं होता।

रूमानिया के एक बैरिस्टर जिनका नाम मेंडेलसोन था जो बाद में इजरायल के निवासी हो गए थे, ने सर्वप्रथम उत्पीड़ितकर्ता संबंध का (Victim-doerelationship) अपराधशास्त्रीय साहचर्य प्रस्तुत किया जिसे उन्होंने दांडिक युग्म (Penal Couple) कहकर संबोधित किया। मेंडलसोन के अनुसार

उत्पीड़ित व्यक्ति की प्रतिशोध शक्ति निम्नलिखित परिस्थितियों में कम भी हो सकती है:—

1. अभियुक्त एवं उत्पीड़ित व्यक्ति के मध्य विद्यमान पारिवारिक, सत्तावादी या संस्तरणात्मक संबंध,

2. उत्पीड़ित व्यक्ति का ज्वालामुखीय स्वभाव, जो विवेक क्षमता को धुंधला बना दे,

3. उत्पीड़ित व्यक्ति का व्यभिचारी सामाजिक पर्यावरण,

4. उत्पीड़ित व्यक्ति की तुलना में अभियुक्त के सामाजिक परिवेश की उच्चता,

उत्पीड़नशास्त्र का संप्रत्यायात्मक विश्लेषण

अपराधशास्त्र में उत्पीड़ित व्यक्तियों का वैज्ञानिक अध्ययन करने के संदर्भ में अभी हाल में ज्ञान की एक नई शाखा के रूप में उत्पीड़नशास्त्र का अन्वेषण हुआ है। ज्ञान की इस नई शाखा के अंतर्गत जहां एक ओर आपराधिक व्यक्ति एवं उत्पीड़ित व्यक्ति के अंतर्संबंधों एवं अंतर्क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है, वहीं दूसरी ओर उत्पीड़ित व्यक्तियों एवं आपराधिक न्याय व्यवस्था, जैसे—पुलिस, अदालत और दंडात्मक या सुधारात्मक संस्थाओं तथा अन्य सामाजिक समूहों एवं संस्थाओं के संयोजनों के अंतर्संबंधों एवं अंतर्क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है।

इस विषय के अंतर्गत यह जानने का प्रयास किया जाता है कि उत्पीड़ित व्यक्तियों को किस प्रकार क्षतिग्रस्त किया जाता है, उनको सताया जाता है, उनका शोषण किया जाता है, उनको परकीकृत (Aliented) किया जाता है, उन्हें गाली दी जाती है, उनसे चालाकी से मतलब सिद्ध किया जाता है, उन्हें सहयोजित किया जाता है एवं उन्हें नीचा दिखाया जाता है इत्यादि। इस अनुशासन का एक दूसरा स्वरूप उस कौतूहल या जिज्ञासा से है कि उत्पीड़ितों को किस प्रकार सामर्थ्यवान-शक्तिमान बनाया जा सकता है, उन्हें किस प्रकार पुनर्वासित किया जा सकता है, उन्हें किस प्रकार शिक्षित किया जा सकता है एवं आदर की दृष्टि से देखा जा सकता है।

आक्सफोर्ड डिक्शनरी आफ सोशियोलोजी के अनुसार, "उत्पीड़नशास्त्र अपराध से उत्पीड़ित व्यक्तियों का अध्ययन है। इसके अंतर्गत अपराध के प्रतिमानों, घटना के स्थान, उत्पीड़ित व्यक्ति एवं अपराधी के बीच की विशेषताओं एवं संबंधों तथा इसके समान पक्ष अंतर्विष्ठ हैं।" उत्पीड़नशास्त्र की विषय-वस्तु को निम्न तीन विस्तृत क्षेत्रों में विभाजित किया जा सकता है—

1. प्रथमतः अपराध के कारण के रूप में उत्पीड़नशास्त्र।

2. द्वितीयतः स्वार्थ समूह (Interest group) के रूप में उत्पीड़ित व्यक्तियों का विस्तार एवं

3. तृतीयतः उत्पीड़ित व्यक्तियों का न्याय परिप्रेक्ष्य।

अपराध की कारणता की व्याख्या के रूप में उत्पीड़नशास्त्र का संबंध अपराध में उत्पीड़ित व्यक्ति की सहभागिता के संघात अथवा अपराध-संपादन में उत्पीड़ित व्यक्ति की भूमिका से है। अन्य शब्दों में अपराध के घटने में उत्पीड़ित व्यक्ति प्रत्यक्षतः या परोक्षतः किस प्रकार सहयोग या मदद करता है, इसका प्रारंभ उत्पीड़नशास्त्र करता है। इस प्रकार आपराधिक कारणता की व्याख्या करने में केवल अपराधी व्यक्ति के आचरण का आधार प्रस्तुत करने के बजाय स्वयं उत्पीड़ित व्यक्ति के आचरण पर ध्यान संकेंद्रित करने से अपराध की कारणता की सम्यक् व्याख्या की जा सकती है, ऐसी मान्यता है उत्पीड़िनशास्त्र की।

उत्पीड़नशास्त्र के द्वितीय क्षेत्र के अंतर्गत यह दर्शाया गया है कि आपराधिक कृत्यों के घटन में उत्पीड़ित व्यक्ति के स्वार्थों का एक विस्तृत परिक्षेत्र है। इन स्वार्थों या हितों की वैधानिक एवं नैतिक तुष्टि का उत्पाद है अपराध। उत्पीड़नशास्त्र के तृतीय क्षेत्र के अंतर्गत उत्पीड़ित व्यक्तियों से संबद्ध न्याय परिप्रेक्ष्य को अंतर्विष्ट किया गया है। इसके अंतर्गत उत्पीड़ित न्याय

के विधिशास्त्रीय आधारों को अंतर्निहित किया जाता है। उत्पीड़ित न्याय के विधिशास्त्रीय आधारों पर उत्पीड़ित व्यक्तियों के अधिकारिक आपराधिक न्याय व्यवस्था या इसके अधिकारियों या कार्यकर्ताओं से उन्हें न्याय दिलाने का प्रयास किया जाता है। उत्पीड़नशास्त्र के ये विषय क्षेत्र एक-दूसरे से अंतर्संबंधित हैं। अपराध की कारणात्मक व्याख्या, उत्पीड़ित व्यक्तियों का स्वार्थ एवं न्याय-क्षेत्र—ये तीनों ही उत्पीड़नशास्त्र की विषय-वस्तु हैं।

आपराधिक व्यवहार के जनन में उत्पीड़ित व्यक्तियों की भूमिका :—

क्या आपराधिक कृत्यों के घटन में उत्पीड़ित व्यक्तियों की भी भूमिका होती है? क्या उत्पीड़ित व्यक्ति प्रत्यक्षतः या परोक्षतः उत्तेजित करता है? क्या उत्पीड़ित व्यक्ति का ज्वालामुखी स्वभाव किसी व्यक्ति को अपराध करने के लिए या कानून का उल्लंघन करने की चुनौती देता है? डा. हन्स बॉन हेटिंग ने सन् 1948 में अपनी पुस्तक 'दि क्रिमिनल एंड हिज बिक्टिम' में सर्वप्रथम इस तथ्य को स्वीकार किया है कि आपराधिक कृत्यों के घटन में उत्पीड़ित व्यक्ति की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। विभिन्न अपराधों में से दो प्रकार के अपराधों, विशेषकर बलात्कार (रेप) और नैतिकता के विरुद्ध अन्य अपराधों में कुछ अंशों तक अधिक महनीय भूमिका पायी जाती है।

सन 1954 में डा. हेनरी एलेनबर्गर ने भी हन्सवान हेंटिंग के उपर्युक्त मत का जोरदार समर्थन करते हुए अपराधी व्यक्ति और उत्पीड़ित व्यक्ति के मनोवैज्ञानिक संबंधों के अपने अध्ययन में इस तथ्य को उद्घाटित किया कि अपराधी और उत्पीड़ित व्यक्ति के बीच एक मनोवैज्ञानिक अंतर्क्रियात्मक संबंध पाया जाता है। अतः आपराधिक कृत्यों के घटन में न केवल अपराधी व्यक्ति ही दोषी होता है, बल्कि उत्पीड़ित व्यक्ति भी कभी-कभी समान रूप से उतना ही दोषी होता है। अतः सभी उत्पीड़ित व्यक्ति निर्दोष नहीं होते, उनमें से प्रायः अधिकांश दोषी होते हैं।

शुल्ज ने सन् 1968 में अपनी रचना "क्राइम इन डेलिन्क्वेसी" में इस संबंध में अपना उद्गार व्यक्त करते हुए लिखा है कि उत्पीड़ित और आक्रामक पद बहुधा परस्पर विनिमेय है तथा आपराधिक कारणों में अपराधी व्यक्ति की अपेक्षा उत्पीड़ित व्यक्ति की अधिक महनीय भूमिका होती है। शुल्ज के अनुसार, एक उत्पीड़ित व्यक्ति आपराधिक व्यक्ति को अपराध करने के लिए निम्नलिखित रूप में अभिप्रेरित करता है—

1. अपराधी में प्रत्यक्षतः उत्तेजन तथा विरोधात्मक प्रतिक्रिया की सृष्टि करना—अवलोकनों के आधार पर यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि प्रायः उत्पीड़ित व्यक्ति स्वयं स्वतंत्र रूप में अपराधी व्यक्ति के आगे आता है और अपनी विरोधात्मक प्रतिक्रियाओं की चिंगारियों से अपराधी व्यक्ति को बेधित करता है। ये विरोधात्मक प्रतिक्रियाओं की चिंगारियां अपराधी व्यक्ति को अपराध करने की प्रेरणा प्रदान करने में अधिक प्रभावशाली सिद्ध होती है। उदाहरणस्वरूप, दो व्यक्तियों में उत्तेजित वाद-विवाद के बीच यदि एक निहत्था व्यक्ति दूसरे के हाथ में किसी जानलेवा अस्त्र-शस्त्र को देखकर भी ओजस्वी शब्दों में यह कहे कि "यदि अपनी मां का दूध पिए हो तो इससे मुझ पर प्रहार करो" और यदि इस चुनौती को स्वीकार करके दूसरा व्यक्ति वास्तव में अपने अस्त्र-शस्त्र से चुनौती देने वाले व्यक्ति पर प्रहार कर देता है तब इसे उत्पीड़ित व्यक्ति द्वारा अपराधी को प्रत्यक्ष उत्तेजित करना ही कहा जाएगा।

2. किसी दूसरे व्यक्ति को परोक्ष रूप से अपराध करने के लिए उत्तेजित करना—यह कि कोई आवश्यक नहीं है कि कोई व्यक्ति प्रत्यक्ष रूप से ही किसी दूसरे व्यक्ति को अपराध करने के लिए उत्तेजित करे। कभी-कभी परोक्ष रूप से भी किसी अन्य व्यक्ति को अपराध करने के लिए उत्तेजित किया जा सकता है। यथा, यदि कोई व्यक्ति अप्रत्यक्ष रूप से अपनी

विरोधात्मक भावनाओं का उद्रेक किसी अन्य शक्तिशाली व्यक्ति के प्रति रोषयुक्त सबल भाषा में करता है तो निश्चित रूप से वह उस सशक्त व्यक्ति को अपराध करने का आमंत्रण देता है। कहा भी गया है कि 'अति संघर्षण करे जो कोई, अनल प्रकट चंदन ते होई।' परोक्ष रूप से किसी सशक्त व्यक्ति के विरोध में अपनी धाक या कीर्तिगाथाओं या गौरव पराक्रम तथा अपने विरोधी पक्ष की कटु या घोर भर्त्सना एवं आलोचनात्मक शब्दावली का प्रयोग करना जंग का वातावरण उत्पन्न करना है।

3. सामान्य निरोधात्मक उपायों की उपेक्षा करना : किसी व्यक्ति द्वारा सामान्य निरोधक उपायों की अवज्ञा करने से भी किसी अन्य व्यक्ति को अपराध करने का सुअवसर मिलता है। उदाहरणस्वरूप, यदि कोई व्यक्ति अपनी साइकिल या स्कूल या कार बिना ताला लगाए हुए किसी सार्वजनिक स्थल पर खुला छोड़कर अन्य कार्यों के संपादन में लग जाए तो ऐसी स्थिति में किसी चोर को उसकी चोरी करने का अवश्य ही एक अच्छा मौका मिलेगा।

4. संवेगात्मक रूप से व्याधिग्रस्त व्यक्ति को उत्तेजित कर अपराधोत्पादन की प्रेरणा देना— संवेगात्मक रूप से व्याधिग्रस्त व्यक्ति सामान्य व्यक्ति से भिन्न होते हैं। ऐसे व्यक्तियों को भावोत्तेजक भावों से ग्रस्त कर अपराधजनित कृत्य करने के लिए सहज ही में बाध्य किया जा सकता है। कभी-कभी ऐसे व्यक्तियों को मात्र चिढ़ाने, छेड़ने, तंग करने या परेशान करनेवाले व्यक्ति को आहत होना पड़ता है। निःसंदेह भावात्मक रूप से मनोविकृत व्यक्ति को छेड़ने मात्र से अपराध करने के प्रबल मनोवेगों से स्पष्ट दर्शन किए जा सकते हैं।

उत्पीड़ित व्यक्तियों के प्रकार

बान हेंटिंग के अवलोकनों के आधार पर स्थूलतः हम उत्पीड़ित व्यक्तियों के पांच प्रकारों का उल्लेख कर सकते हैं—

1. उदासीन या अकर्मण्य उत्पीड़ित व्यक्ति— उत्पीड़ित व्यक्तियों की इस श्रेणी के अंतर्गत उन क्षतिग्रस्त व्यक्तियों को अंतर्विष्ट किया जा सकता है जिन पर किसी प्रकार की हानि-लाभ की भावनाओं का प्रभाव पड़ता है। वे ऐसे वीतरागी, निःस्पृह, हृदयहीन, भावनाहीन या मुर्दा दिल होते हैं जो स्वयं अपनी हानि की परवाह नहीं करते हैं।

2. आत्मसमर्पणशील उत्पीड़ित व्यक्ति : उत्पीड़ित व्यक्तियों की इस कोटि के अंतर्गत उन क्षतिग्रस्त व्यक्तियों को समाविष्ट किया जा सकता है जिनकी क्षति उनके स्वयं के सहभावी प्रयासों के कारण होती है।

3. सहयोगी उत्पीड़ित व्यक्ति : ये वे क्षतिग्रस्त होते हैं जिनकी क्षति अधिक लाभ के लालच के कारण होती है।

4. उत्तेजक उत्पीड़ित व्यक्ति : इस प्रकार के उत्पीड़ित व्यक्ति वे क्षतिग्रस्त व्यक्ति होते हैं जो अपराध करने के लिए किसी दूसरे व्यक्ति को उत्प्रेरित करते हैं।

5. मनोविकृत उत्पीड़ित व्यक्ति : इस श्रेणी में आने वाले क्षतिग्रस्त व्यक्ति संवेगात्मक या भावनात्मक रूप से असामान्य रहते हैं। मनोविकृत व्यक्ति में जो दोष पाए जाते हैं वे हैं अपने व्यवहारों के प्रति आसक्ति, अपने बंधु, बांधवों के अन्य मित्रों के प्रति प्रेम भाव, हिंसात्मक उत्तेजना तथा तत्क्षण आवेगों की संतुष्टि। ये दोष प्रायः सभी मनोविकृत उत्पीड़ित व्यक्तियों में पाए जाते हैं।

उत्पीड़ित व्यक्तियों की क्षतिपूर्ति :

उत्पीड़नशास्त्र का एक बहुत भिन्न पक्ष तब उभरकर आता है जब अपराधी व्यवहार के अध्ययन में उत्पीड़ित व्यक्ति की भूमिका पर ध्यान केंद्रीभूत करने के बजाए अपराधों से उत्पन्न परिणामों जैसे—धन संबंधी हानि, शारीरिक क्षति और मृत्यु के लिए उत्पीड़ित व्यक्तियों और उनके आश्रितों हेतु क्षतिपूर्ति या हरजाना देने की बात पर ध्यान संकेंद्रित किया जाता है।

अधिकांश विकसित देशों ने इस संदर्भ में विविध प्रकार के वैधानिक क्रियाविधियों को क्रियान्वित किया है जिनके द्वारा प्रताड़ित व्यक्ति अपराधी व्यक्ति से क्षतिपूर्ति के लिए दावा कर सकता है तथा हरजाने का संग्रहण कर सकता है। परंतु अपराधी के पास उत्पीड़ित व्यक्ति की क्षतिपूर्ति या हरजाना देने के लिए कम साधन या संपत्ति होती है।

दंड के इतिहास का अध्ययन करने से सुस्पष्ट होता है कि प्रताड़ित व्यक्ति या उसके परिवार को क्षतिमूल्य देने की परंपरा आदिम समाजों तथा प्राचीन राज्यों में सर्वत्र दिखाई देती है। तथापि राज्यों के पास अपराधियों को दंड देने का विशिष्ट अधिकार होता है और यह कार्य वह न्यायालयों द्वारा अपराध एवं दंड की गंभीरता के अनुसार क्रियान्वित करवाता है। न्यायालय उत्पीड़ित व्यक्ति को संतुष्टि प्रदान करने के लिए उसकी क्षति या हानि की गंभीरता की प्रकृति को पर्यवेक्षित करते हुए अपराधी को दंडित करते समय यह निर्णय देता है कि वह उत्पीड़ित व्यक्ति को क्षतिमूल्य प्रदान करे।

संप्रति अनेक देशों में उत्पीड़ित व्यक्ति की क्षतिपूर्ति या हरजाने की समस्या के संदर्भ में पुनर्परीक्षण करने की दिशा में एक आंदोलन जारी है। स्वीडिश की संसद में सन् 1926 में इस संबंध में आवश्यक विधान पारित किया गया था। ब्रिटेन में दिसंबर सन् 1914 तथा न्यूजीलैंड में जनवरी सन् 1964 से उत्पीड़ित व्यक्तियों के लिए क्षतिपूर्ति संबंधी आधुनिक कार्यक्रम प्रारंभ किए गए हैं। भारतवर्ष में दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 357 एवं 358 के अंतर्गत क्षतिपूर्ति का प्रावधान किया गया है। यह स्पष्ट अनुभव किया जा रहा है कि अपराधी अपने कृत्य के लिए क्षतिपूर्ति की अदायगी करने की स्थिति में नहीं होता है, अपराधी वकील एवं अपराधशास्त्री इस समस्या की गंभीरता पर चिंतन-मनन करते हुए यह तर्क प्रस्तुत करते हैं कि उत्पीड़ित व्यक्ति की क्षति, हानि या मृत्यु के लिए क्षतिमूल्य की अदायगी राज्य द्वारा की जानी चाहिए। ऐसा उदाहरण श्रमिकों के क्षतिपूर्ति विधानों या औद्योगिक क्षति कानूनों में पाया जाता है जो कई पीढ़ियों से अनेक देशों में विद्यमान है।

उत्पीड़ित व्यक्तियों की क्षतिग्रस्तता के लिए राज्य उत्तररायित्व का न होना हास्यास्पद तब बन जाता है जब कोई आधुनिक देशों में अपराधी को पुनर्स्थापित करने के संदर्भ में परिवीक्षा, कारागार एवं पैरोल या उत्तर संरक्षण कार्यक्रमों, प्रशासन पर ध्यान संकेंद्रित करता है। निःसंदेह आज का राज्य उत्पीड़ित व्यक्ति और उसके आश्रितों को क्षतिमूल्य दिलवाने में यद्यपि सैद्धांतिक रूप में अभिरुचि अवश्य लेता है। किंतु व्यावहारिक रूप में उसको साकार करने में कोसों दूर हैं। अतः यह प्रश्न ज्यों का त्यों बना हुआ है कि यदि राज्य उत्पीड़ित व्यक्तियों के हितार्थ बहुत कुछ नहीं कर सकता है, तो क्या वह उनको कुछ भी नहीं कर सकता है?

विश्व में क्षतिपूर्ति संबंधी कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने की घोषणा करने वाले राज्यों के अध्ययन के आधार पर यह कहने में मुझे संकोच नहीं है कि अब तक किसी भी राज्य ने राज्य स्तरीय क्षतिपूर्ति करने की योजना को कार्यान्वित करने में बहुत विशेष अभिरुचि प्रकट नहीं की है। तथापि यह भविष्यवाणी करना युक्तियुक्त होगा कि विश्व के अधिकांश राज्यों में उत्पीड़ित व्यक्तियों को राज्य द्वारा भुगतान करने की एक व्यवस्था अवश्य स्थापित की जाएगी।

प्रासंगिक विचार

उत्पीड़ित व्यक्तियों की क्षतिपूर्ति की समस्या उत्पीड़नशास्त्र का परिप्रेक्ष्य है, किंतु यह उस व्यवहार विज्ञान परिप्रेक्ष्य से भिन्न है जो कर्ता में अपराध अभिप्रेरित करने में उत्पीड़ित व्यक्ति की भूमिका स्थापित

करने का प्रयास करता है। उत्पीड़ित व्यक्तियों की ऐसी बहुत कम संख्या है जो स्पष्टतः अविचारित अभिप्रेरणात्मक भूमिका की अदायगी करते हैं और न्यायालय उन्हें क्षतिपूर्ति से वंचित करने में न्यायसंगत निर्णय देता है।

संदर्भ-ग्रंथ

1. बी.मेंडेलसोंन, “दि ओरिजन आफ विक्टिमोलाजी”, वाल्यूम 3 मई-जून, 1963 पृष्ठ 239-241

2. हंस बॉन हेंटिंग “दि क्रिमिनल एंड हिज बिक्टिम” येल विश्वविद्यालय, प्रेस न्यू हेवेन, 1948

3. चार्ल्स हसी, ब्रिटेन पेज दि विक्टिम आफ दि क्राइम, न्यूयार्क टाइम्स, फरवरी 21, 1965 सेक्शन 6 (मैगजीन)

4. “दि स्टेटस आफ दि न्यूजीलैंड”, 1963 वाल्यूम, विलिंग्टन, 1964, नं. 134, पेज 861-875

5. प्रो. श्यामधर सिंह, अपराधशास्त्र के सिद्धांत, सपना अशोक प्रकाशन, वाराणसी।

क्या है पुलिस स्टेशन?

इंदराज सिंह
पु. उपमहानिरीक्षक, सीमा सुरक्षाबल, दिल्ली

अंग्रेजों ने पुलिस थाने की स्थापना कर भारतीय जवानों को पुलिस में भर्ती करके अपने राज्य काल के दौरान अपनी हुकूमत का वर्चस्व बनाए रखने के लिए पुलिस का इस्तेमाल बहुत ही सोचे-समझे तरीके से किया था। पुलिस प्रशासन और ब्रिटिश साम्राज्य के खिलाफ अगर कोई भी साजिश रची जाती थी, तो उसकी जानकारी सरकार को समय से पहले मिल जाती थी। ब्रिटिश शासन के दौरान पुलिस अधिकारी ज्यादातर अंग्रेज ही थे और नीचे की रैंक के अधिकारी भारतीय ज्यादा थे। भारतीय पुलिस अधिकारियों को ही भारतवासियों के खिलाफ प्रयोग करते थे।

पुलिस स्टेशन जगह-जगह बनाने का मकसद भारतवासियों के ऊपर कड़ी नजर तथा खेतों में होने वाले उत्पादन पर लगान एकत्रित करने इत्यादि पर पूरा नियंत्रण रखना ही अंग्रेजी शासकों की रणनीति थी। पुलिस चौकियों में नियुक्त स्टाफ अलग-अलग रैंक के होते थे जो अपने इलाके के ऊपर कानून व्यवस्था तथा थानेदारी के कर्तव्य को निभाते थे। वे लगभग 50 कि.मी. से लेकर 100 कि.मी. तक के क्षेत्र पर प्रशासन चलाते थे। पुलिस स्टेशन अधिकारी अपने पुलिस स्टेशन में नियुक्त अधीनस्थों पर नियंत्रण बनाए रखने के साथ-साथ पुलिस स्टेशन के दस्तावेजों के रख-रखाव और थानेदारी की व्यवस्था भी अंग्रेजों ने ही शुरू की थी जिसमें हेडकांस्टेबल, उपनिरीक्षक और निरीक्षक पद के अधिकारी तैनात किए जाते हैं। पुलिस स्टेशन की सीमा तथा थाने में रखी मूल्यवान संपत्ति, धन व गिरफ्तार अभियुक्तों की सुरक्षा के लिए भी उत्तरदायी होते हैं।

पुलिस स्टेशन पुलिस प्रशासन की सबसे छोटी इकाई है जो पुलिस तंत्र की रीढ़ की हड्डी मानी जाती है। अगर मनुष्य की रीढ़ की हड्डी में दर्द होता है तो मनुष्य अपने आपको बीमार और बेचैन महसूस करता है यानी उठने-बैठने में बहुत दर्द महसूस होता है जो मनुष्य को रीढ़ की हड्डी की महत्वता की याद कराता है। ठीक उसी प्रकार पुलिस स्टेशन की महत्वता राज्य की कानून व्यवस्था को चलाने में महत्वपूर्ण है। पुलिस विभाग या तंत्र के अच्छे-बुरे कार्य सिर्फ पुलिस स्टेशन में तैनात अधिकारियों के कार्य या क्रिया पर निर्भर करता है।

समाज में पुलिस स्टेशन के एक जवान की गलत क्रिया पूरे पुलिस विभाग के चेहरे को दर्शाती है तथा एक अच्छा कार्य पुलिस विभाग के साहस और मनोबल को बढ़ाता है।

हिंदू काल के दौरान प्राचीन भारत की पुलिस विभाग की कोई पुख्ता जानकारी और लेख नहीं है, लेकिन इतिहासकारों के अनुसार मौर्य साम्राज्य में पुलिस तंत्र था। राजा अपनी जनता के सुख-दुःख तथा अन्य गतिविधियों की जानकारी अपने गुप्तचर भेजकर रखते थे। समय से पहले किसी भी साजिश को क्रिया में आने से पहले सेना भेजकर दमन कार्य कर दिए जाते थे। उस समय गुप्तचर अन्य प्रकार की वेषभूषा का प्रयोग करते थे जिससे आम जनता को किसी भी प्रकार से कोई शक नहीं होता था तथा सामान्य लोग अपनी अच्छी-बुरी बातें खुलकर बता देते थे।

इतिहासकारों के अनुसार चंद्रगुप्त मौर्य के पौत्र अशोक के दयाभाव के व्यवहार ने ही मौर्य साम्राज्य का पतन किया था, क्योंकि सेना और गुप्तचर सक्रिय नहीं थे तथा कानून की व्यवस्था धीरे-धीरे गिर गई थी।

मुगल काल के शासक जो अफगान और मुगल शासन से आए थे, उन्होंने अपनी अलग पुलिस प्रणाली लागू की। फौजदार और कोतवाल प्रणाली मुगल काल के दौरान लागू की गई थी। जिले को कई परगनों तथा इलाकों में बांटा गया था। फौजदार की सहायता जमींदार किया करते थे। शहरों में पुलिस प्रशासन कोतवाल के अधीन था, लेकिन इस प्रणाली के दौरान कर्मचारी वेतन

के अलावा निवासियों से गैर कानूनी धन वसूलते थे। मुगल काल में अलाउद्दीन खिलजी और शेरशाह सूरी के शासनकाल के दौरान भारतीय पुलिस प्रणाली ने अहम भूमिका निभाकर शासन को सफल बनाया और काफी सुधार लाया गया था।

अंग्रेजों का आगमन हुआ। शुरू में अंग्रेजों को काफी समस्याओं का सामना करना पड़ा। कुछ समय बाद दारोगा प्रणाली का विकास हुआ। दारोगा प्रणाली भी असफल रही तथा फिर सुधार किया गया। सन् 1855 में टार्चर आयोग का गठन किया गया जिसकी रिपोर्ट 16 अप्रैल, 1855 ई. में प्रस्तुत की गई थी, लेकिन अंग्रेजों को एक ऐसी भारतीय पुलिस की आवश्यकता थी जो अंग्रेजों को स्थायी शासन बनाए रखने में सहयोगी सिद्ध होती। पुलिस प्रणाली में और सुधार लाने के लिए सन् 1860 ई. में एक पुलिस आयोग का गठन किया गया था जिसका मुख्य उद्देश्य व्यय में कमी करना था न कि एक आदर्श पुलिस का गठन, लेकिन सन् 1861 में पुलिस अधिनियम के द्वारा मिलिटरी पुलिस समाप्त करने तथा पुलिस ड्यूटियों के लिए कांस्टेबलरी के समान एक ही बल के गठन की सिफारिश की गई थी।

भारतीय पुलिस आज भी 1861 के पुलिस अधिनियम के तहत कार्य कर रही है। आज के भारत के पुलिस थाने की ड्यूटियों तथा अंग्रेजों के समय के थाने की ड्यूटी में जमीन-आसमान का अंतर आ गया है। आज थाने में सही स्थानों पर भवन बनाए गए हैं तथा संचार के सारे साधन प्रदान किए गए हैं जिसे पूर्णरूप से आत्मनिर्भर बनाया गया है। अंग्रेजों के साम्राज्य से अब तक काफी बदलाव आए हैं। भारत की जनसंख्या भी बढ़ी है। पुलिस की संख्या भी बढ़ी है तथा अपराध और अपराधों की भी संख्या बढ़ी है। पुलिस स्टेशन और चौकियां भी जरूरत के हिसाब से बनाई गई हैं तथा और भी बन रही हैं।

कानून की जानकारी तथा शिक्षित समाज और मीडिया की भूमिका ने आज के व्यक्ति को सचेत कर दिया है और हर स्तर पर किसी भी प्रकार की ड्यूटी में कोई गलती पुलिस कर्मचारियों को झेलनी पड़ती है इसलिए पुलिस थानों में एक पुलिस कर्मचारी की ड्यूटी में भी काफी बदलाव आया है।

एक पुलिस थाने में पुलिस कर्मचारियों द्वारा निम्नलिखित ड्यूटियां निभाई जाती हैं—

1. अपराध का रजिस्ट्रेशन और अन्वेषण।

2. टेलीफोन काल्स को प्राप्त करना तथा पब्लिक शिकायतों को सुनना।

3. सामान्य डायरी और दैनिक डायरी का रख-रखाव करना।

4. पुलिस स्टेशन में रिपोर्टिंग कक्ष को 24 घंटे सही रखना।

5. गिरफ्तार व्यक्तियों को सुरक्षा प्रदान करना।

6. पुलिस स्टेशन के सारे दस्तावेजों का रख-रखाव करना।

7. किसी भी शिकायत की खोजबीन करना तथा उचित कार्रवाई करना।

8. एफ.आई.आर. दर्ज करना और कानून के तहत उचित कार्रवाई करना।

9. पुलिस थाने में मालखाने का उचित रख-रखाव करना।

10. पुलिस स्टेशन की सुरक्षा करना।

11. किसी भी आम व्यक्ति का सत्यापन करना।

12. बुरे चरित्र वाले व्यक्तियों के ऊपर नजर रखना।

13. अपराधियों के पुलिस स्टेशन के इलाके में सक्रिय अपराधियों की पूर्ण जानकारी तथा उनकी गतिविधियों के ऊपर नजर रखना।

14. अपराध और अपराधियों के बारे में सूचना एकत्रित कर उन पर उचित कार्रवाई करना।

15. इलाके में सार्वजनिक समारोह और वी.आई.पी. के आगमन के दौरान उचित सुरक्षा का प्रबंध करना।

16. पुलिस स्टेशन के इलाके में समय-समय पर

पेट्रोलिंग करके बीट के इलाके में सूचना एकत्रित करना।

17. पुलिस थाने में उचित संचार व्यवस्था को बनाए रखना।

18. थाने में कंप्यूटर और सर्वर व्यवस्था को बनाए रखना।

19. थाने में उपलबध वाहनों की उचित तैनाती कर इलाके में उचित उपस्थिति दर्ज करना।

20. पुलिस थाने में उपस्थित कर्मचारियों की कार्यसूची बनाए रखना तथा निरीक्षण करना।

21. खूफिया दस्ते को अपराध से प्रभावित इलाकों में तैनात करना।

22. अपराध से संबंधित वस्तुओं को साक्ष्य के तौर पर उचित रख-रखाव तथा सुरक्षा प्रदान करना।

23. सड़क हादसा होने पर घायल व्यक्तियों को घटना स्थल से नजदीकी अस्पताल पहुंचाना।

24. सड़क पर धरना प्रदर्शन इत्यादि को रोकना।

25. सामुदायिक सहयोग के लिए सीनियर सिटीजन तथा स्थानीय नेताओं से संपर्क रखना।

26. थाने के इलाके से गुजरने वाले वी.वी.आई.पी. और वी.आई.पी. को सुरक्षा मुहैया कराना।

27. पेट्रोलिंग करके सरकारी संपत्ति को नुकसान होने से बचाना।

28. इलाके में होने वाले आपसी दुश्मनी, जाति दंगे, जमीनी विवाद, चोरी, घरेलू हिंसा इत्यादि की छानबीन कर निपटारा करना।

29. चर्च, मंदिर और मस्जिद के इलाकों में उचित सुरक्षा का बंदोबस्त करना।

30. ग्राम पंचायत, ग्राम सभा के मेंबर के साथ उचित समन्वय रख ला एंड आर्डर की व्यवस्था को बनाए रखना।

31. सरकारी सड़क, जमीन तथा भवन इत्यादि में अवैध कब्जे को हटवाना।

32. अवैध भवन को तोड़ने के लिए पुलिस की व्यवस्था करना।

33. अज्ञात शवों को उनकी जगह से हटाना और उचित कार्रवाई करना।

34. शादी-विवाह तथा अन्य पार्टियों के दौरान निश्चित समय के बाद लाउड-स्पीकर तथा ऊंची आवाज में चल रहे संगीत को रोकने के लिए उचित समय पर शिकायतों का निपटारा करना।

35. इलाके में छोटे-छोटे आपसी झगड़े की शिकायतों पर उचित कार्रवाई कर जनता की सहायता करना।

36. अनेक प्रकार के मेले, सांस्कतिक कार्यक्रम, सभाएं और खेल से संबंधित कार्यक्रम इत्यादि के दौरान जनता को सुरक्षा प्रदान करना।

37. आर.टी.आई. के मामलों पर उचित कार्रवाई करना।

38. घटनास्थल पर उचित सुरक्षा प्रदान करना और घटना में घायल व्यक्तियों की अस्पतालों में उचित देखभाल करना।

39. अन्य।

पुलिस स्टेशन में तैनात कर्मचारियों की जिम्मेदारी होती है कि वे अपने पुलिस स्टेशन के इलाके और सीमा के अंदर शांति कायम रखें तथा इलाके और सीमा के अंदर शांति कायम रखें तथा उस इलाके में रहनेवाले सामाजिक व्यक्तियों की सुरक्षा तथा संपत्ति की सुरक्षा करते हुए घटित होनेवाले अपराधों को रोकने के लिए योजना बनाकर इलाके को अपराध मुक्त रखें। इसके साथ-साथ अगर कोई अपराध घटित होता है तो जल्दी कार्रवाई कर अपराधियों को पकड़कर कानूनी कार्रवाई करें। समाज के व्यक्तियों को न्याय दिलाने का पुलिस विभाग का भरपूर प्रयत्न रहता है। जरूरत पड़ने पर इलाके की सघनता को देखते हुए जगह-जगह पर पुलिस पोस्ट स्थापित करके अपराधियों के मनोबल को कम तथा जनता के मनोबल को बढ़ाने की कोशिश करती है, लेकिन सभी प्रकार के नियंत्रण के उद्देश्य के लिए ऐसी पुलिस चौकियां पुलिस स्टेशनों के अधीन होती हैं।

भारत के प्रत्येक राज्य में अलग-अलग पुलिस तंत्र है। पुलिस तंत्र के अंतर्गत पुलिस चौकियों को सुनियोजित तरीके से जोन, रेंज, जिला स्तर तथा क्षेत्रीय अधिकारी, रेल पुलिस स्टेशन तथा चौकियों की जरूरत के हिसाब से संगठित किया गया है। एक पुलिस स्टेशन के अंतर्गत 2 से 3 पुलिस चौकियां तथा एक क्षेत्रीय अधिकारी के क्षेत्र में 3 से 4 पुलिस स्टेशन और एक जिले में 3 से 4 क्षेत्रीय अधिकारी तैनात होते हैं। पुलिस स्टेशन की पूर्ण देखभाल की जिम्मेदारी जिले के एस.एस.पी. की होती है और समय-समय पर पुलिस स्टेशन का दौरा कर पुलिस के जवानों का मनोबल हमेशा ऊंचा रखने की कोशिश की जाती है।

कुछ पुलिस स्टेशन ग्रामीण इलाके में होते हैं जिनकी जिम्मेदारी का इलाका कुछ बड़ा होता है। इसका मुख्य कारण जनसंख्या का प्रतिवर्ग किलोमीटर घनत्व का कम होना और घटित अपराधों की संख्या में कमी है। लेकिन शहरी पुलिस स्टेशन के पुलिस कर्मचारियों की संख्या इलाके में रहनेवाली कुल जनसंख्या, ज्यादा अपराधों की संख्या तथा कम जिम्मेदारी का इलाका होता है जिससे जल्दी-से-जल्दी अपने इलाके में पुलिस कर्मचारी पहुंचकर अपराधियों को पकड़ सकें या अपराध के घटित होने से पहले ही रोक सकें। इसके अलावा जिस राज्य में रेलवे लाइन या स्टेशन बनने हैं, उनकी निगरानी के लिए, रेल में घटित अपराधों की रिपोर्ट दर्ज करने तथा रोकथाम आदि के लिए रेलवे पुलिस स्टेशन स्थापित किए गए हैं।

बी.पी.आर.डी, नई दिल्ली की वार्षिक रिपोर्ट 15 जनवरी, 2012 के मुताबिक आज भारत में कुल 14,185 पुलिस स्टेशन हैं, जिनमें से शहरी पुलिस स्टेशन 9,122 हैं तथा ग्रामीण पुलिस स्टेशन 4,612 हैं। इनके अलावा रेलवे पुलिस स्टेशन 451 ही हैं जो जिले में नियुक्त पुलिस अधिकारी की देख-रेख में कार्य करते हैं। हर वर्ष नए पुलिस स्टेशन जरूरत के हिसाब से खुलते रहते हैं। अच्छी कानून व्यवस्था को कायम रखने के लिए कुछ दस्तावेज पुलिस स्टेशन में तैयार किए जाते हैं। ऐसे सभी रिकार्ड किसी भी घटित अपराध की छानबीन, अपराध की प्रथम सूचना रिपोर्ट पुलिस थाने के इलाके में रहनेवाले सक्रिय अपराधी तथा किसी भी केस से संबंधित संपत्ति, पुलिस स्टेशन का इतिहास इत्यादि को बराबर तैयार करते हैं जो समय पड़ने पर उच्चाधिकारी की जानकारी के लिए तथा सबूतों के तौर पर कोर्ट में भी पेश किए जाते हैं।

एक पुलिस स्टेशन में निम्नलिखित दस्तावेज बनाए जाते हैं जो हमेशा पुलिस स्टेशन की संपत्ति के रूप में सुरक्षित रखे जाते हैं। कुछ दस्तावेजों की सारणी निम्न है जो पुलिस विभाग के कार्य को मजबूती प्रदान करने मे महत्वपूर्ण सिद्ध होते हैं—

1. पुलिस स्टेशन का संपत्ति रजिस्टर
2. ग्राम अपराध रजिस्टर
3. अपराध रजिस्टर
4. प्रथम सूचना रिपोर्ट
5. एफ.आई.आर. इंडेक्स रजिस्टर
6. सक्रिय अपराधियों का रजिस्टर
7. बीट से संबंधित सूचनाओं का रजिस्टर
8. छोटे-मोटे अपराधियों (गुंडों) का रजिस्टर
9. जमानत रजिस्टर
10. त्योहार रजिस्टर
11. राजनैतिक दलों और गतिविधियों का रजिस्टर
12. आरोप-पत्र रजिस्टर
13. गैंग रजिस्टर
14. शस्त्र रजिस्टर
15. विजिटर्स रजिस्टर
16. मालखाना रजिस्टर
17. ड्यूटी बंटवारे का रजिस्टर
18. सैनिक सम्मेलन रजिस्टर
19. अन्य रजिस्टर

उपरोक्त सूची से सिद्ध होता है कि एक पुलिस स्टेशन में बहुत सारे दस्तावेज रखे जाते हैं जो समय से पूर्ण रखे जाते हैं, क्योंकि दस्तावेजों के बल पर ही एक अन्वेषण अधिकारी कोर्ट में सबूत पेश कर पाता है तथा

अपनी जिम्मेदारी को निभाने के लिए सच्ची रिपोर्ट पेश करता है। पुलिस स्टेशन में ही किसी अपराधी या अपराधों की प्रथम रिपोर्ट लिखी जाती है। इन दस्तावेजों को हमेशा तैयार रखना एक बहुत बड़ा कार्य है जो एक पुलिस स्टेशन में एक या दो व्यक्तियों द्वारा किया जाता है।

अतः पुलिस स्टेशन, नियुक्त अधिकारी, बनाए गए रिकार्ड/ दस्तावेज की उचित संख्या तथा उचित जरूरी उपकरणों का होना न केवल पुलिस कर्मचारियों के मनोबल को ऊंचा करेगा बल्कि ड्यूटी को पूर्णरूप से निभाने में अहम भूमिका निभाएगा।

लेखकों से निवेदन

यदि पुलिस विज्ञान में प्रकाशन के लिए आपके पास पुलिस, शांति-व्यवस्था, अपराध न्याय-व्यवस्था आदि पर कोई लेख है या आप लेख लिखने में सक्षम हैं तथा रुचि रखते हों तो अपने लेख यथा शीघ्र भेजें। अच्छे लेखों को प्रकाशित करने का हमारा पूरा प्रयास रहेगा। लेख टाइप किया होना चाहिए तथा इसके संबंध में फोटो, चार्ट आदि हों तो उन्हें भी साथ भेजना चाहिए। प्रकाशित होने वाले लेखों पर समुचित पारिश्रमिक की व्यवस्था है।

यदि आपने पुलिस विज्ञान से संबंधित किसी विषय पर उपयोगी पुस्तक लिखी है और आप पुलिस विज्ञान में उसे कड़ी के रूप में प्रकाशित करवाना चाहते हैं तो हमें पांडुलिपि भेजें।

यदि आप कर्मियों के कार्य को लेकर कहानी या अन्य किसी विधा में लिखने में रुचि रखते हों तो हम ऐसे साहित्य का भी स्वागत करेंगे।

यदि पुलिस विज्ञान से संबंधित किसी हिन्दीतर भाषा के उच्चस्तरीय लेख का अनुवाद किया हो और आपके पास अनुवाद प्रकाशन का कापीराइट हो अथवा उनके कापीराइट की आवश्यकता न हो तो ऐसे लेख/सामग्री भी प्रकाशनार्थ आमंत्रित हैं। प्रकाशित लेखों पर समुचित मानदेय देने की व्यवस्था है। लेख भेजते समय यह प्रमाणित करें कि लेख मौलिक/अनूदित व अप्रकाशित है तथा इस पर कोई मानदेय नहीं लिया गया है। अनूदित लेख के कापीराइट के संबंध में भी सूचित करें।

विषय आदि के बारे में विस्तृत जानकारी के लिए पुलिस विज्ञान की नमूने की प्रति मंगाने के लिए संपर्क करें :—

संपादक
पुलिस विज्ञान
पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो
ब्लाक-11, चौथी मंजिल
सी.जी.ओ. कम्पलैक्स, लोदी रोड
नई दिल्ली-110003
फोन : 71213215

वैब साइट — डब्लू.डब्लू.डब्लू. बीपीआरडी.एनआईसी.इन

पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो

गृह मंत्रालय

पं. गोविन्द वल्लभ पंत पुरस्कार योजना

पुलिस, कारागार एवं न्यायालयिक विज्ञान से संबंधित विषयों पर हिन्दी में पुस्तक लेखन के लिए रचनाएं आमंत्रित की जाती हैं। मूल प्रकाशित पुस्तकों पर 5 पुरस्कार 30,000/- रु. प्रति पुरस्कार (एक पुरस्कार महिलाओं के लिए आरक्षित है), दो पुरस्कार अनूदित मुद्रित पुस्तकों के लिए 14,000/- रु. प्रति पुरस्कार (एक पुरस्कार महिलाओं के लिए आरक्षित है)। योजना के भाग दो में 40,000/- रु. के दो पुरस्कार हैं। जिसके लिए निर्धारित विषयों पर रूपरेखाएं आमंत्रित की जाती हैं। जिसमें सामान्य वर्ग के लिए **दिए गए विषय पर आवेदक उस विषय पर लिखने वाली पुस्तक में क्या-क्या सामग्री व अध्यायों आदि का उल्लेख करते हुए 5-6 पृष्ठ की एक रूपरेखा को प्रस्तुत करना होगा** तथा महिलाओं के लिए आरक्षित विषय में भी उपरोक्त प्रक्रिया अपनाई जाएगी। रचनाएं/रूपरेखाएं भेजने की अंतिम तिथि सामान्यतः 30 सितंबर होती है। विस्तृत जानकारी के लिए कृपया संपादक (हिंदी), पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो (गृह मंत्रालय), ब्लाक सं. 11, 3/4 मंजिल, सी.जी.ओ. कंप्लैक्स, लोदी रोड, नई दिल्ली-110003 से संपर्क करें।

(फैक्स : 011-24362425)

अपराध विज्ञान तथा पुलिस विज्ञान में डाक्टरेट कार्य हेतु अध्येतावृति योजना

पुलिस विज्ञान तथा अपराध विज्ञान में डाक्टरेट कार्य हेतु ब्यूरो द्वारा 6 अध्येतावृतियों के लिए भारतीय नागरिकों से आवेदन पत्र आमंत्रित किए जाते हैं। इस योजना के तहत विज्ञापन प्रति वर्ष माह में भारत के सभी प्रमुख समाचार पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित किया जाता है। इसके लिए अंतिम तिथि 30 जून होती है। इसमें अभ्यर्थी को पी.एच.डी. के लिए विश्वविद्यालय से पंजीकृत होना आवश्यक है। इसमें अभ्यर्थी को पहले 2 वर्ष 8000/- रु. तथा तीसरे वर्ष 9000/- रु. तथा इसके साथ फुटकर खर्च के लिए 10000/- रु. तथा जिस संस्था से वह पंजीकृत होगा उसे 3000/- रु. प्रदान किए जाएंगे। विस्तृत जानकारी के लिए अनुसंधान एकक, पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो, ब्लाक सं. 11, 3/4 मंजिल, सीजीओ कंप्लैक्स, लोदी रोड, नई दिल्ली-110003 से संपर्क किया जा सकता है। पूर्ण जानकारी कार्यालय की वेब साइट www.bprd.gov.in में भी देखी जा सकती है।

पुलिस एवं कारागार संबंधी विषयों पर अनुसंधान परियोजनाएं आमंत्रित

पु.अनु.वि. ब्यूरो (गृह मंत्रालय) **पुलिस एवं कारागार** से संबंधित विभिन्न विषयों पर अनुसंधान परियोजनाओं के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करने के लिए गैर सरकारी संगठनों, विश्वविद्यालयों व व्यक्तिगत शोधकर्ताओं को उनके संबंधित विश्वविद्यालयों के माध्यम से आवेदन आमंत्रित कर रहा है। आवेदन भेजने की अंतिम तिथि 30 सितंबर होती है। विस्तृत जानकारी के लिए उपनिदेशक (अनु.) एवं सहायक निदेशक (अनु.), ब्लाक सं. 11, 3/4 मंजिल, सीजीओ कंप्लैक्स, लोदी रोड, नई दिल्ली-110003 पर संपर्क कर सकते हैं। तथा ब्यूरो की www.bprd.gov.in वेब साइट से भी जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

पं. गोविन्द वल्लभ पंत पुरस्कार योजना के अंतर्गत
ब्यूरो द्वारा प्रकाशित पुस्तकें

क्र. सं.	पुस्तक का नाम	लेखक का नाम	मूल्य
1.	**भारतीय पुलिस का इतिहास** (अतीतकाल से मुगलकाल तक)	डा. शैलेन्द्र चतुर्वेदी	54/-
2.	**भारत में केन्द्रीय पुलिस संगठन**	श्री एच. भीष्मपाल	65/-
3.	**ग्रामीण पुलिस : समस्याएं एवं समाधान**	श्री रामलाल विवेक	65/-
4.	**ग्रामीण पुलिस : समस्याएं एवं समाधान**	श्री शंकर सरौलिया	70/-
5.	**विकासशील समाज में समसामयिक पुलिस की भूमिका**	श्री आर.एस. श्रीवास्तव	105/-
6.	**स्वातंत्र्योत्तर भारत में पुलिस की भूमिका एवं जनता का दायित्व**	डा. कृष्णमोहन माथुर	210/-
7.	**मादक पदार्थ एवं पुलिस की भूमिका**	श्री हरीश नवल	—
8.	**सामाजिक चेतना के परिप्रेक्ष्य में पुलिस की भूमिका का उद्‌भव**	प्रो. मीनाक्षी स्वामी	—
9.	**समग्र न्याय-व्यवस्था में पुलिस का स्थान एवं भूमिका**	श्री ललितेश्वर	600/-
10.	**पुलिस दायित्व एवं नागरिक जागरूकता**	डा. सी. अशोकवर्धन	568/-
11.	**महिला और पुलिस**	श्रीमती अमिता जोशी	100/-
12.	**मानवाधिकार और पुलिस**	डा. जी.एस. वाजपेयी	346/-
13.	**नई आर्थिक नीति एवं अपराध**	डा. अर्चना त्रिपाठी	183/-
14.	**बाल अपराध**	डा. गिरिश्वर मिश्र	225/-
15.	**न्यायालयिक विज्ञान की नई चुनौतियां**	डा. शरद सिंह	200/-
16.	**मानवाधिकार संरक्षण एवं पुलिस**	श्री रामकृष्ण दत्त शर्मा एवं डा. सविता शर्मा	510/-
17.	**सामुदायिक पुलिस व्यवस्था**	डा. तपन चक्रवर्ती, डा. रवि अम्बष्ट	205/-
18.	**संगठित अपराध**	श्री महेन्द्र सिंह आदिल	313/-
19.	**पुलिस कार्यों का निजीकरण**	डा. शंकर सरौलिया	330/-
20.	**साइबर क्राइम**	डा. अनुपम शर्मा	450/-
21.	**अपराधों की रोकथाम और प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल**	डा. निशांत सिंह	545/-
22.	**अपराध पीड़ित महिलाओं की समस्याएं**	डा. ऋता तिवारी, डा. उपनीत लाली	775/-
23.	**वैध समस्याओं के निदान हेतु बढ़ती हिंसा प्रवृत्ति**	श्री राकेश प्रकाश	
24.	**आतंकवाद एवं जन साझेदारी**	श्री विश्वेश शर्मा	665/-
25.	**व्यावसायिक यौनकर्मियों का सुधार एवं पुनर्वास**	श्रीमती नीना लांबा	665/-
26.	**बंदियों का सुधार एवं पुनर्वास**	प्रो. दीप्ति श्रीवास्तव	665/-
27.	**नक्सलवाद और पुलिस की भूमिका**	श्री राकेश कुमार सिंह	1140/-
28.	**अपेक्षित परिवर्तन में महिलाओं की भूमिका**	डा. मंजूदेवी	992/-
29.	**पर्यावरण और प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण में पुलिस की भूमिका**	डा. पंकज श्रीवास्तव एवं नीतू मिश्रा	896/-

ब्यूरो द्वारा प्रकाशित उपरोक्त सभी पुस्तकें, नियंत्रक, प्रकाशन विभाग, सिविल लाइंस, दिल्ली-110054 से प्राप्त की जा सकती हैं।